मंजरी

स्त्री के मन की

अप्रैल 2017

अंक–12

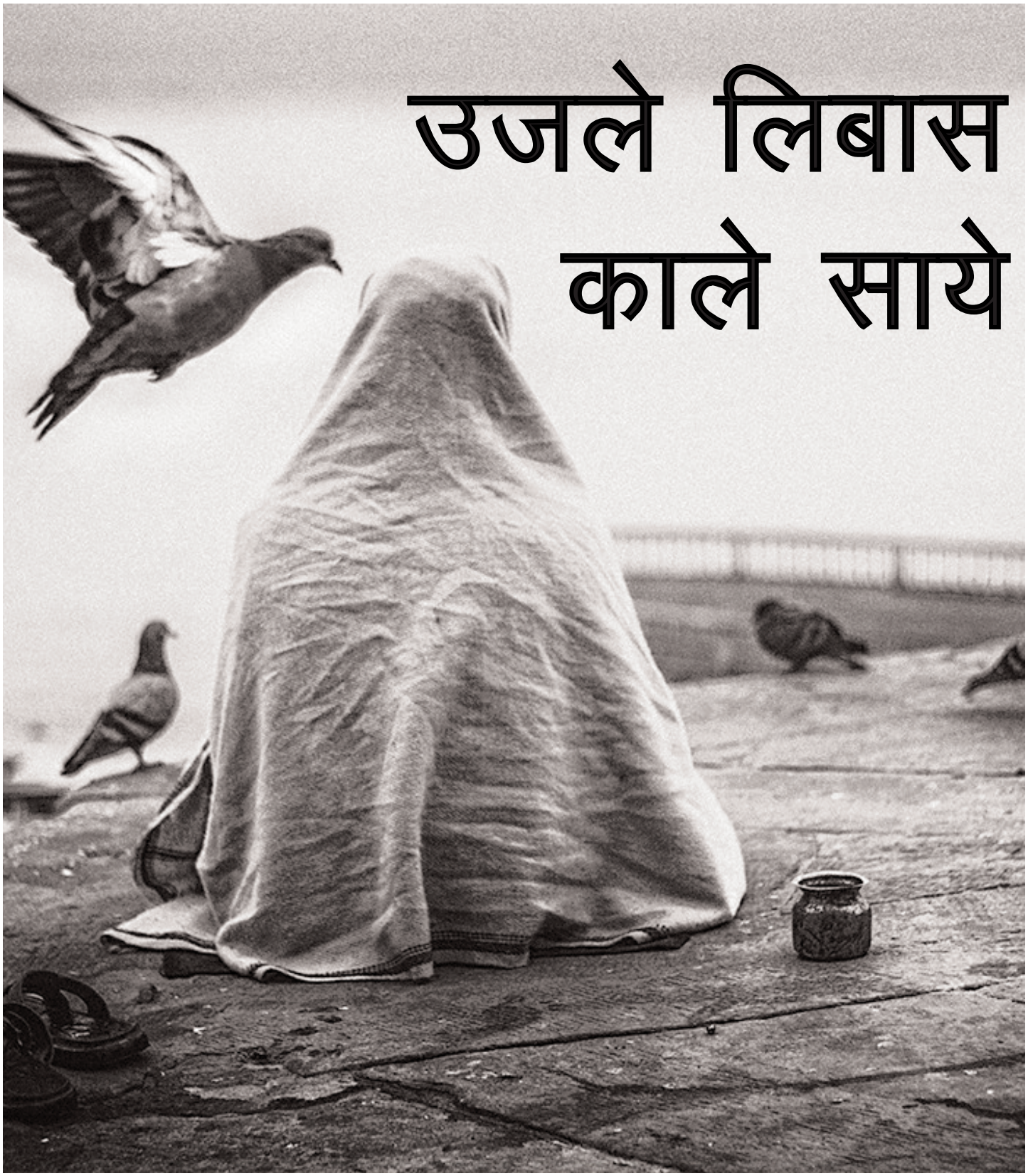

उजले लिबास काले साये

Sulabh Sanitation Movement

Sulabh International
Social Service Organisation

The healthy sign of self-reliance & self-esteem...

Sudha

वादा शुद्धता का

That glow of self-esteem and pride on the face of milk-farmers of Bihar. That radiance of good health on the families of the state. These are the rewards we take greatest pride in. As the leading milk producers of Bihar and Jharkhand, COMFED procures 19 lakh litres of milk from over 11 lakh milk-farmers through 20,534 co-operative societies each day. Selling this milk and sumptuous milk products at pocket-friendly prices, we are ushering in a healthy prosperity in the state.

A proud example of White Revolution in Bihar.

Toll Fee No. **18003456199**

COMFED

BIHAR STATE MILK CO-OPERATIVE FEDERATION LTD.

E-mail: comfed.patna@gmail.com, Website:www.sudha.coop

SHARAD

takshila
connect
to the
universe

संकल्पना

संकल्पना

इक्विटी फाउंडेशन लंबे अरसे से एक वेब पत्रिका शुरू करने के बारे में सोच रहा था। मकसद था महिला और समाज के मुद्दों को शिद्दत से उठाना। जब हमने चीजों को एक साथ कर उसे पत्रिका के रूप में सजाने के बारे में सोचना शुरू किया तो इस क्रम में कई लोगों से जुड़े। हमने महिलाओं को पत्रिका से जोड़ने की कोशिश की। हम दोस्तों से मिले और परिचितों से बात की। महिलाओं के सामाजिक समूहों और शिक्षाविदों के एक साथ जुड़ने के बाद जो स्वरूप सामने आया वह है 'मंजरी'।

मंजरी यानी कोंपल। शाखों में फूटने वाली नन्ही पत्तियां। नई शाखों का सृजन करने वाले इन कोंपल को कुम्हलाने से बचाना जरूरी है नहीं तो पूरे पेड़ का विस्तार कुंद हो जाएगा। ठीक उसी तरह स्त्री के मन की मंजरी को सहेजने की जरूरत है वरना पेड़रूपी समाज विकृति का शिकार हो जाएगा। हमारा प्रयास इसी मंजरी को पुष्पित पल्लिवत करने का है जो औरत की सोच और उसकी कोशिश को सही दिशा प्रदान कर सके।

मंजरी के सृजन के दौरान पहले तो 10–30 लोगों का एक ढीला–ढाला समूह बना। विचार आते गए। अलग–अलग विषयों और मुद्दों पर। समूह में कुछ अनमनी महिलाएं थीं तो कुछ सहानुभूति दिखाने वाले पुरुष भी। कुछ महज एक या दो बैठकों में शामिल हुए तो कुछ जब मन में आया, आ गए। बाकी बचे लोगों ने 'मंजरी' को मुकाम पर ले जाने का दायित्व अपने कंधों पर लिया। 'मंजरी' का लक्ष्य एक ऐसा मंच उपलब्ध कराना है जहां बुद्धिजीवियों को उनकी खुराक मिले तो शोधकर्ताओं की जिज्ञासा शांत हो। क्रियान्वयन के लिए बहस और तर्क के रास्ते हमेशा खुले रहें। इक्विटी की लगातार कोशिश रही है शोध और क्रियान्वयन के बीच की दूरी को पाटना। ऐसे में हमारा मानना है कि शोध तब तक अप्रासंगिक हैं जब तक कि इनका लोगों की जिंदगी और उनके क्रियाकलापों से जुड़ाव न हो। ठीक इसी तरह सिविल सोसायटी के तौर पर अगर हम जमीनी सच्चाई से वाकिफ न रहें, जिनमें सामाजिक प्रक्रियाएं और ऐतिहासिक मूल्यों का समावेश है और जो समाज में रहने वाले लोगों के मूल्यों और उनके चरित्र को आकार देते हैं, तो किसी भी कोशिश का कोई मतलब नहीं रहता है।

'मंजरी' एक उद्यम है, क्रियाशीलता को शोध आधारित रचना और आलोचना के नजरिये से देखने का जो महिला अधिकारों के साथ–साथ जीवन के हर पलू को इंगित करे। नियमित गैर सरकारी संगठनों और अकादमिक तंत्रों से इतर 'मंजरी' राजनीति और आदर्शवादिता को लांघ कर सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक सुधारों को सांस्कृतिक संवे. दनशीलता के आधार पर मापती है। 'मंजरी' उन तमाम कार्यकर्ताओं, विद्वानों, शिक्षाविदों, पत्रकारों, प्रोफेशनल, गृहणियों और नीति निर्धारकों द्वारा पढ़ी जाएगी जो किसी समस्या के लिए समाधान आधारित नवीन दृष्टि और पृथक सोच रखते हैं। यह पत्रिका अपने पाठकों को जेंडर आधारित मुद्दों को जैविक और सामाजिक आधार पर परखने की छूट देती है। व्यक्ति और समाज की विचारधारा में जेंडर को लेकर क्या बदलाव आये और उनका क्या असर हुआ, इसकी पूरी पड़ताल करने की आजादी लोगों को होगी। यह पत्रिका एक कोशिश है पड़ताल की प्रवृत्ति को जगाने की ताकि लोग तेजी से बदलते और विविधताओं से भरे समाज में पूरी क्षमता से काम करने को तैयार हो सकें जिसमें महिलाओं के प्रति भेदभाव भी एक अहम मुद्दा होगा। महिला समानता और अधिकारों पर 'मंजरी' के दखल से उन बेशुमार कार्यकर्ताओं, संगठनों और विद्वजनों को फायदा होगा जो दहेज, यौन प्रताड़ना, महिला अधिकारों, महिला आरक्षण, आर्थिक सुधार और अल्पसंख्यक समुदायों के निजी कानूनों में रुचि रखते हैं।

पत्रिका का मकसद

इक्विटी फांडेशन खुद को सुविधाविहीन महिलाओं को उनकी पूर्ण क्षमता से अवगत कराने और समाज में उनके क्रियाशील प्रभुत्व को स्थापित कराने की दिशा में वाहक के तौर पर देखता है। देश के विकास के हर क्षेत्र में महिलाओं की समान भागीदारी की राष्ट्रीय नीति तभी सफल हो पाएगी जब महिलाओं की भूमिका और उनके योगदान को कमतर आंकने वाले संस्थान और विचारों को हतोत्साति किया जाये या उनका पूरी तरह सफाया किया जाय। 'मंजरी' की परिकल्पना समाज और अर्थव्यवस्था में महिलाओं के जीवन और उनके स्तर को प्रभावित करने वाले विचारों के निर्माण, विकास और उनके प्रसार के लिए की गई है। बारहवीं पंचवर्षीय योजना के परिप्रेक्ष्य में समानता संबंधी मुद्दों को इस प्रकार समग्र रूप में देखने की जरूरत है जो असमानता की अंतरवर्गीय विशेषताओं को जाहिर कर सके। समानता पर आधारित 'मंजरी' के ज्यादातर आलेख भिन्न–भिन्न समूहों को निशाने पर रखते हैं जो कुछ हद तक बेद जरूरी भी है। इसलिए यह पत्रिका कुछ समूहों के कुछ विशेषाधिकारों के पूर्ण निष्कासन और अंतरवर्गीय दृष्टिकोणों के स्थापन के बीच नियंत्रक की भूमिका में होगी जो नीति निर्धारण और योजनाओं के क्रियान्वयन के दौरान असमानता को उसके तमाम स्वरूपों के साथ सामने रखने में कारगर होगी। ऐसे में इसका मकसद लैंगिक भेदभाव के निर्मूलन की ओर वह विवेचनात्मक चर्चा छेड़ने का है जो वर्तमान परिदृश्य में शोधों का एजेंडा तय कर सके और एक बेहतर वैकल्पिक प्रस्ताव का सृजन कर सके। अब तक यह संगठन कार्यशाला, कांफ्रेंस और अन्य सार्वजनिक आयोजनों के जरिये अपनी प्रतिबद्धता दर्शाता रहा है लेकिन अब इस पत्रिका के माध्यम से यह क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय अतिथि लेखकों, जिनमें विद्वजन, अधिवक्ता, सरकार, पत्रकार, फिल्म निर्माता, कवि और सामाजिक कार्यकर्ता हैं, को जोड़ने की कोशिश कर रहा है।

संपादकीय

संरक्षण

पद्मश्री डा. उषा किरण खान
प्रख्यात लेखिका एवं साहित्यकार

मणिकांत ठाकुर
प्रख्यात पत्रकार

प्रो. भारती एस. कुमार
प्रोफेसर (सेवा.) इतिहास, पटना विवि

डा. रेणु रंजन
प्रोफेसर (सेवा.), समाज शास्त्र पटना विवि

प्रो. डेजी नारायण
प्रोफेसर, इतिहास, पटना विवि

परामर्श

मनीष कुमार
ब्यूरो चीफ, एन.डी.टी.वी. बिहार

कीर्ति
नेशनल कोऑर्डिनेटर, कैरीटास स्विट्जरलैंड (CARITAS Switzerland)

डा. शरद कुमारी
प्रोजेक्ट ऑफिसर, एक्शन एड

सचिव, बिहार महिला समाज

अंजिता सिन्हा
पत्रकार

डा. मधुरिमा राज
लेखिका

लोगों के जीवनस्तर में अच्छी प्रगति होने के बाद भी समाज में विधवाओं की स्थिति अभी भी सोचनीय बनी हुई है। हालात विकासशील देशों में और भी खराब हो जाते हैं जहां के सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवेश समाज के असहाय वर्गों के मौलिक मानवाधिकारों की भी उपेक्षा करते हैं। विकसित और विकासशील, दोनों ही देशों में महिलाओं और पुरुषों की जीवन प्रत्याशाओं में काफी अंतर पाया जाता है। यह अंतर पुरुषों द्वारा पुनर्विवाह कर लेने से लगभग दोगुना हो जाता है जो यह तय कर देता है कि विधवाओं की संख्या विधुरों की तुलना में हमेशा ज्यादा रहेगी। इससे भी अधिक, चूंकि औरतें पहले से अधिक पढ़ी–लिखी, स्वतंत्र और अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होने लगी हैं, इसलिए तलाक और इसके मानसिक प्रभावों की दर भी बढ़ी है। एक विधवा औरत कितने तरह के मनोवैज्ञानिक तनावों से जूझती है, इस बात की हमेशा से उपेक्षा की जाती रही है। इससे पहले कि ये महिलाएं अपने अधिकृत स्थान को पा लें, समाज की मानसिकता में बदलाव लाना जरूरी है, और ये तभी संभव है जब लोगों और कानून निर्माताओं के मन में जबर्दस्त इच्छाशक्ति हो।

पूरी दुनिया में लोगों का जीवनस्तर तेजी से बदल रहा है, मगर आबादी का एक हिस्सा अभी भी बहुत दयनीय स्थिति में है, जिसे विधवा कहा जाता है (महिलाओं की तरक्की से संबंधित यूएन का संभाग, 2000)। पति–पत्नी में से किसी एक की मृत्यु हो जाने पर दूसरे पर उसका प्रभाव अलग–अलग प्रकार से होता है और उन पर इस घटना का अत्यधिक मानसिक प्रभाव भी पड़ता है। ये कहा जा सकता है कि विधवाओं को छोड़कर ऐसा कोई वर्ग नहीं है जिस पर किसी की मौत का इतना बड़ा प्रभाव पड़ता है। अफसोस की बात है कि उन्हें कई विकासशील देशों के आंकड़ों से 'लापता' रखा गया है और पिछले 25 वर्षों में उन्हें शायद ही कभी महिलाओं की गरीबी, विकास, स्वास्थ्य अथवा मानवाधिकार से जुड़ी रिपोर्टों में स्थान दिया गया है (ibid)। सामाजिक–आर्थिक और मनोवैज्ञानिक तौर पर उनकी लाचारी के बढ़ते प्रमाण अब इन ''अदृश्य'' औरतों के बारे में चली आ रही रुढ़ीवादी सोच और मान्यताओं को चुनौती दे रहे हैं।

कई विकासशील देशों में, विधवाओं की वास्तविक संख्या, उनकी उम्र और जीवन से जुड़े अन्य सामाजिक–आर्थिक पहलू अज्ञात हैं। लगभग पूरे विश्व में, महिलाओं की कुल संख्या में विधवाओं की संख्या अच्छी–खासी है, जो वयस्क महिलाओं में करीब 7 से लेकर 16 प्रतिशत तक है (महिलाओं की तरक्की से संबंधित यूएन का संभाग, 2000)। हालांकि कुछ देशों और क्षेत्रों में तो उनकी संख्या इससे भी अधिक है। विकसित देशों में, ज्यादातर विधवाएं अधिक उम्र की हैं जबकि विकासशील देशों में इसकी चपेट में युवा औरतें भी आ जाती हैं जिनमें से कई बच्चों के पालन–पोषण करने की उम्र में होती हैं (ibid)। कई क्षेत्रों में तो लड़कियां वयस्क होने से पहले ही विधवा हो जाती हैं। महिलाओं के पुरुषों की तुलना में अधिक विधवा होने के दो कारण हो सकते हैं – महिलाएं पुरुषों की तुलना में ज्यादा जीती हैं (वैश्विक स्तर पर जारी एक आंकड़े में महिलाओं और पुरुषों की जीवन प्रत्याशा में अंतर दिखाया गया गया है)। इसके अलावा, अक्सर लड़कियों की शादी अधिक उम्र के पुरुषों से हो जाती है, हालांकि इसमें अब कमी आ रही है। अब क्योंकि महिलाएं ज्यादा जीती हैं और उनका विवाह अधिक उम्र के मर्दों से हो जाती है तो उनके विधवा होने की संभावनाएं पुरुषों की तुलना में ज्यादा होती है। पति या पत्नी को खो देना, अपने बच्चे को खो देने के बाद सबसे दुखद घटना होती है। यह विडंबना ही है कि पत्नी को खोने के बाद पति को होने वाली अव्यवस्था और आघात पति को खो देने वाली विधवा की तुलना में कम होता है। वैधव्य अपने साथ असंख्य सामाजिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक परेशानियां लेकर आता है, विशेषकर पति की मौत के बाद के पहले वर्षों में।

हमारी बात

मुख्य संपादक

नीना श्रीवास्तव

संपादक

दीपिका झा

शोध

नीना श्रीवास्तव
दीपिका झा

प्रबंधन/व्यवस्था

राहुल कुमार

प्रकाशन

इक्विटी फाउंडेशन

सहयोग

सुलभ इंटरनेशनल
सुधा डेयरी
तक्षशिला एजुकेशनल सोसायटी
पावरग्रिड कार्पोरेशन
द ऑफसेटर, पटना
बंसल ट्यूटोरियल, पटना
इंटरनेशनल स्कूल, पटना

संपर्क

इक्विटी फाउंडेशन
123 ए, पाटलीपुत्र कॉलोनी
पटना, 13
फोन : 0612-2270171

ई–मेल
equityasia@gmail.com
वेबसाइट
www.emanjari.com

© इक्विटी फाउंडेशन

दोनों ही लिंग वर्ग के लिए आर्थिक नुकसान सबसे बड़ी समस्या होती है। अगर पति परिवार का मुख्य कमाने वाला व्यक्ति है, तो उसकी मौत के बाद पत्नी उसकी आय से वंचित हो जाती है और परिवार का केन्द्रीय धड़ा छिन्न–भिन्न हो जाता है। कई अध्ययनों में यह बात साबित हुई है कि विधवाओं में विवाहिताओं की तुलना में मानसिक रोग ज्यादा होते हैं। 1999 में चेन एट अल ने अपने अध्ययन में कहा कि विधवाओं को विधुरों की तुलना में दुःख, अवसाद और परेशानी ज्यादा होती है।

वैधव्य से जुड़ी एक दूसरी समस्या है अकेलापन। कई विधवाएं अकेली जीती हैं। उनके सामने जिंदा रहने की तमाम परेशानियां तो हैं ही, एक महिला होने के नाते उनका आत्मसम्मान भी समाप्त हो जाता है। उनका लोगों के साथ संपर्क और साथ छूट जाता है? यही कारण है कि वे अनुत्तरदायी हो जाती हैं और हर चीज से दूर हो जाती हैं। विधवापन से जुड़ा सबसे बड़ा दुःख भावनात्मक है। यदि वैवाहिक जीवन दुख भरा भी रहा हो, तो भी उन्हें नुकसान ही सहना पड़ता है। दंपति की भूमिका समाप्त हो जाती है, सामाजिक जीवन दंपति से बदलकर अकेले लोगों की संगति में तब्दील हो जाता है? विधवाओं के पास उनका दुःख बांटने के लिए दिन–रात का कोई साथी नहीं होता, और यही उनके जीवन की स्वाभाविक गति बन जाती है। लोग उनके जीवन में आए दुख पर अलग–अलग तरीके से प्रतिक्रिया देते हैं। ज्यादातर, विधवाओं के लिए सबसे मुश्किल समय पति के अंतिम संस्कार के बाद का होता है। युवा विधवाओं के पास उनका कोई साथी नहीं होता और वृद्ध विधवाओं की अपेक्षा वे वैधव्य का दुःख झेलने के लिए न तो तैयार होती हैं और न ही भावनात्मक तौर पर मजबूत। विधवापन अपने साथ आर्थिक क्षति भी लेकर आता है क्योंकि पति की मौत से उनके आय का एक बड़ा सहारा छूट जाता है। ये हमेशा से विवाद का विषय रहा है कि विधवा और विधुर में से किसका दुःख ज्यादा बड़ा होता है। आर्थिक तौर पर वैधव्य पुरुषों की तुलना में महिलाओं के लिए ज्यादा दुखद होता है और यह क्षति कई बार उन्हें मनोवैज्ञानिक तौर पर नुकसान पहुंचाती है।

भारत में 40 मिलियन से अधिक विधवाएं हैं –जो कि देश की कुल महिला आबादी का 10 प्रतिशत है, जबकि पुरुषों के मामले में यह मात्र तीन प्रतिशत है– और इनकी संख्या एचआईवी/एड्स तथा गृह युद्धों के कारण भी बढ़ती जा रही है। 54 प्रतिशत विधवा औरतें 60 साल से अधिक उम्र की हैं जबकि 12 प्रतिशत औरतें 35 से 39 वर्ष के बीच में विधवा हो जाती हैं? पुनर्विवाह नियम नहीं बल्कि अपवाद है। केवल 10 प्रतिशत विधवाएं दोबारा शादी करती हैं। भारत शायद विश्व में अकेला ऐसा देश है जहां वैधव्य व्यक्तिगत क्षति के अतिरिक्त एक सामाजिक संस्था के तौर पर मौजूद है। धार्मिक रीतियां और प्रतीकवाद विधवाओं के अभाव को और गहरा बना देती हैं। विश्व के अन्य सभी पितृवादी समाजों की तरह ही भारत में भी महिलाओं को पुरुषों के माध्यम से सामाजिक सम्मान मिलता है। ऐसे में, पुरुष की अनुपस्थिति में वह बिना अस्तित्व के रह जाती है और कह सकते हैं कि उसकी सामाजिक मृत्यु हो जाती है। भारत में केवल 28 प्रतिशत विधवाएं पेंशन पाने के योग्य हैं और उनमें से भी केवल 11 प्रतिशत को वास्तव में पेंशन की राशि मिल पाती है। अगर कोई विधवा आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर नहीं है तो उसे अपने सास–ससुर या माता–पिता की दया पर जीना पड़ता है। और अगर उनकी वसीयत में उक्त विधवा या उसके बच्चों के लिए कोई संपत्ति नहीं है तो फिर उसे स्वयं पर ही आश्रित होना पड़ता है।

हिन्दू विधवाओं को कई प्रकार के सामाजिक निषेधों का सामना करना पड़ता है। एक सामान्य नियम यह कह सकते हैं कि जितनी ऊंची जाति होती है, उतना ही ज्यादा विधवाओं को प्रतिबंधों का सामना करना पड़ता है। परंपरागत रूप से जब किसी पुरुष की मृत्यु होती है तो उसकी विधवा से उम्मीद की जाती है कि वह सभी प्रकार के भौतिक सुखों का त्याग कर दे। उसे अब आकर्षक नहीं दिखना होगा और पूरे जीवन सफेद साड़ी पहननी होगी। पति की मृत्यु की खबर सुनते ही वे अपनी चूड़ियां तोड़ देती हैं और फिर कभी गहने और सिंदूर –लाल पाउडर जो विवाहित हिन्दू महिलाएं अपनी मांग और माथे पर लगाती हैं और जो उनके विवाहित होने का प्रमाण होता है–धारण नहीं करती हैं।

हमारी बात

सती (विधवाओं को जलाना) इस विश्वास की चरम अभिव्यक्ति है (महिलाओं की तरक्की से संबंधित यूएन का संभाग, 2000)। ऊंची जातियों में विधवा पुनर्विवाह बाधित होता है? और जहां इसकी अनुमति मिलती भी है तो वह केवल परिवार के सदस्य के साथ। इसके अलावे अगर विधवा पुनर्विवाह करती भी है तो उसे अपने बच्चों का परित्याग करना पड़ता है और साथ ही संपत्ति से जुड़े अधिकारों का भी। अगर वो बच्चों को अपने साथ रखती है तो उसे दूसरी शादी के बाद बच्चों के साथ दुर्व्यवहार का भय सताता रहता है। भारतीय विधवाओं को 'बुरी नजर वाली' कहा जाता है, गरीब परिवारों पर दुर्भाग्य और अनचाहा बोझ डालने वाली (महिलाओं की तरक्की से संबंधित यूएन का संभाग, 2000)। संपत्ति और जमीन के विवादों के कारण हजारों विधवाओं को उनके घरों से निकाल दिया जाता है और रिश्तेदारों द्वारा भुला दिया जाता है। ऐसी परिस्थिति में, शिक्षा और प्रशिक्षण नहीं होने के कारण उनके पास विकल्प सीमित होते हैं और वे शोषित और असंगठित घरेलू दाई (ज्यादातर पति के घर में गुलाम), या फिर भिक्षावृति अथवा वेश्यावृत्ति करने के लिए मजबूर हो जाती हैं।

मथुरा, वाराणसी और तिरुपति के मंदिर स्थलों पर परिवारों द्वारा छोड़ दी गईं विधवाओं के आर्थिक और यौन शोषण के बारे में अक्सर मीडिया में सनसनीखेज रिपोर्ट आती रहती हैं। इन स्थलों पर हजारों विधवाएं अत्यंत दरिद्र और बुरी स्थिति में रहती हैं। एक रिपोर्ट के मुताबिक, अकेले वृंदावन में 20 हजार से अधिक विधवाएं जीने के लिए संघर्ष कर रही हैं (महिलाओं की तरक्की से संबंधित यूएन का संभाग, 2000)। युवा विधवाओं को वेश्यावृत्ति तो वृद्धाओं को भीख मांगने या पर्यटकों के सामने भजन गाने के लिए बाधित किया जाता है। वृद्ध विधवाएं तो कई बार लंबे समय तक इन मंदिरों में ही रहती हैं क्योंकि उन्हें बाल विधवा के तौर पर वर्षों पहले यहां छोड़ दिया गया था। मंदिरों की विधवाओं और कभी–कभार सती होने की घटनाओं को अंतरराष्ट्रीय अखबार प्रमुखता से लेते हैं। लेकिन हर रोज पीड़ा झेलने वाली विधवाएं, जिन्हें उनके रिश्तेदारों द्वारा भावनात्मक, शारीरिक और यौन रूप से प्रताड़ित किया जाता है और जो अपना घर छोड़कर शहरों की गलियों में भीख मांगने के लिए विवश हो जाती हैं, अक्सर छिपी रह जाती हैं (महिलाओं की तरक्की से संबंधित यूएन का संभाग, 2000)। कुपोषण, आश्रय के अभाव, स्वास्थ्य सुविधाओं से महरूम और हिंसा की चपेट में आसानी से आने वाली ये विधवाएं न केवल शारीरिक रोगों का शिकार हो जाती हैं बल्कि लंबे अवसाद से भी ग्रस्त हो जाती है (महिलाओं की तरक्की से संबंधित यूएन का संभाग, 2000)। विधवाएं कई बार बलात्कार की शिकार भी हो जाती हैं। उनकी स्थिति और भी जटिल हो जाती है क्योंकि दूसरी आम औरतों की भांति ही विधवा औरतें भी अपने अधिकारों से नावाकिफ होती हैं और न्याय प्रकिया तक नहीं पहुंच पाने के लिए थोपी गईं बाधाओं का सामना करती हैं, जैसे कि अशिक्षा, खर्च और हिंसा का डर (ibid)।

पुरुष की मृत्यु के तुरंत बाद उसके उत्तराधिकारी संपत्ति का बंटवारा करने पर आमादा हो जाते हैं जिसमें घर भी शामिल होता है। ऐसी परिस्थिति में विधवा को प्रायः अकेला छोड़ दिया जाता है और वह अपने बेटे पर निर्भर हो जाती है। इन परिस्थितियों को देखते हुए महिला का उसके मृत पति की संपत्ति और उसकी अन्य चीजों में अधिकार, पेंशन, तलाकशुदा औरतों के लिए भत्ते, जिन महिलाओं के पास उनके बच्चों को रखने का अधिकार नहीं है, उन्हें मिलने का अधिकार और दोबारा विवाह करने के बाद अपने बच्चों को साथ रखने का अधिकार दिलाने के लिए बनाए गए कानूनों का सख्ती से अनुपालन कराये जाने की जरूरत है। दरअसल, वैधव्य एक संकट और समस्या दोनों है। किसी महिला के जीवन में अचानक अथाह बदलाव लाने की दृष्टि से यह एक संकट है। जब वह महिला उससे निबटने की कोशिश करती है तो यह एक समस्या बन जाती है जो ज्यादातर आर्थिक होती है।

2011 में जब संयुक्त राष्ट्र ने 23 जून को अंतरराष्ट्रीय विधवा दिवस घोषित किया था, तब उसका आधिकारिक स्पष्टीकरण करना बेहद कठिन था – कई संस्कृतियों में विधवाएं बुरी प्रथाओं की घोर चपेट में हैं, गरीबी और युद्ध के बाद की विभिषिकाओं को झेलने के लिए विवश हैं, जिन्होंने उनके पतियों को लील लिया– इसलिए वैधव्य को स्वयं में ही मानवाधिकार आपदा के रूप में देखा जाना चाहिए।

"आके होठों पर कभी मायूस आहें थम गईं
और कभी सूनी कलाई पर निगाहें जम गईं
इतनी दुनिया में कहीं अपनी जगह पाती नहीं
यास उस हुद की के शौहर की भी याद आती नहीं"

–कैफी आजमी

(These lines reveal a deep sense of pathos and also the suppressed desires of the widow,
Hopeless sighs sometimes froze on the lips
And sometimes eyes were glued on the naked wrists
She finds no place for herself in the whole world
So sorrowful that she even forgot to remember her husband)

Srivastava

नीना श्रीवास्तव

अतिथि संपादक

इन्दिरा गोस्वामी का साहित्य विश्व और हिन्दू विधवा जीवन

विधवा जीवन की पीड़ा को शब्दों में संजोनेवालीं एवं विधवा मन के विद्रोह को उद्घटित करने वालीं प्रिय मित्र इन्दिरा गोस्वामी को समर्पित आलेख

डॉ. रंजना हरीश

सुप्रसिद्ध आसामी लेखिका पद्मश्री इन्दिरा गोस्वामी की निकट सहयोगी एवं मित्र रही हैं। साथ ही साथ गुजरात यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद के अंग्रेजी विभाग की पूर्व अध्यक्ष भी रह चुकी हैं।

सुप्रसिद्ध आसामी लेखिका पद्मश्री[1] इन्दिरा गोस्वामी (1942–2011) का नाम लेते ही मेरे मन में ढेर सारी यादें उमड़ती हैं। जितना तेजस्वी और यशस्वी उनका साहित्य है, उतना ही उनका हिन्दू विधवाओं के प्रति समर्पण भी। उनकी लेखनी के द्वारा हिन्दू विधवाओं के प्रति उनकी संवेदना याद आती है। साथ में ही याद आता है उनका प्रभावशाली सुंदर व्यक्तित्व –ऊंचा कद और गौर वर्ण, स्वस्थ शरीर और सीधे खड़े रहने की अदा, काजल और मेक–अप से चित्रित उनकी मां दुर्गा के जैसी बड़ी–बड़ी आंखें, माथे पर बड़ी सी बिंदी, होठों पर मधुर मुस्कान और मीठे बोल–ये सभी कुछ याद आता है। इन्दिरा जी का मित्रों के प्रति स्नेहादर और बात–बात पर मेरे खंभे पर अपना हाथ रखकर बतियाने की उनकी अदा भी याद आती है।

वर्ष 2000 का ज्ञानपीठ पुरस्कार उन्हें मिलने की घोषणा के लगभग तुरंत बाद इन्दिरा जी गुजरात यूनिवर्सिटी के अंग्रेजी विभाग द्वारा आयोजित 'शक्ति' नामक राष्ट्रीय सम्मेलन में विशेष अतिथि के रूप में अहमदाबाद आई थीं। उनके प्रभावशाली व्यक्तित्व और महिला सशक्तिकरण की श्रद्धा से भरपूर प्रवचन ने गुजरात के मीडिया को चकाचौंध कर दिया था। उनकी उपस्थिति ने मेरे द्वारा आयोजित राष्ट्रीय सम्मेलन का 'शक्ति' नाम सार्थक कर दिया था। सेमिनार के हफ्तों बाद तक गुजरात के प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया पर इन्दिरा गोस्वामी छाई रही थीं।

अहमदाबाद में आयोजित इस राष्ट्रीय संगोष्ठी में इन्दिरा गोस्वामी की उपस्थिति का कारण हमारी पुरानी मैत्री थी। मित्रता की खातिर वे कुछ भी करने को तैयार रहती थीं। 1990 में पहली बार मैं इन्दिरा जी को मैं उनके दिल्ली यूनिवर्सिटी कैम्पस के आवास में मिली थी। उस दिन से लेकर उनकी मृत्यु तक, अर्थात् वर्ष 2011 तक, हमारी साहित्यिक मैत्री यथावत रही थी। हर साल किसी न किसी बहाने हमारा मिलना हो जाता था।

2003 में इन्दिरा जी ने आसामी लेखिका संघ की अध्यक्ष होने की हैसियत से दिल्ली में एक भव्य वार्षिकोत्सव का आयोजन किया था। उस उत्सव में मैंने उन्हें हजारों आसामी लेखिकाओं के रोल मॉडल के रूप में देखा था। लेखिका होने के साथ–साथ उनके व्यक्तित्व में एक चुंबकीय प्रेरणादायी तत्व भी था जो उन्हें एक सफल नेता के रूप में स्थापित कर चुका था। अपने जीवन के अंतिम वर्षों में वे उल्फा एवं भारत सरकार के बीच शांतिदूत का रोल भी अदा कर रही थीं।

.....

दिल्ली साहित्य अकादमी, ज्ञानपीठ एवं विविध पुरस्कारों से सम्मानित इन्दिरा गोस्वामी का मूल नाम था मेमोनी रायसम गोस्वामी। उनका मूल वतन था आसाम। वे वहां के प्रतिष्ठित संपन्न परिवार की लाडली बेटी थीं। वे जितनी सुंदर और कल्पनाशील थीं उतनी ही संवेदनशील भी थीं। उनकी इस संवेदनशीलता को कल्पना के पंख मिले तब वे साहित्यकार के रूप में उभरीं। परंतु संवेदनशीलता के इस गुण का एक नकारात्मक पहलू भी था। अतिशय संवेदनशीलता के कारण इन्दिरा जी जिंदगी भर डिप्रेशन का शिकार रहीं। आत्महत्या के विचारों ने उन्हें जीवन भर सताया। ...और भाग्य की विषमता देखिये, इन्दिरा जी की माता जी ने उदास बेटी के भविष्य के बारे में जानने के लिए ज्योतिषी को बुलवाया और ज्योतिषी बोले, ''मां, आपकी बेटी की जन्मपत्री के ग्रह ऐसे भयंकर हैं कि इसे

1 वर्ष 2002 में इन्दिरा जी को पद्मश्री पुरस्कार दिये जाने का फैसला लिया गया था लेकिन इन्दिरा जी ने उसे लेने से इंकार कर दिया था।

अतिथि संपादक

जीवन भर दुःख में डूबी देखने से तो अच्छा है कि आप उसे काटकर ब्रह्मपुत्र में बहा दें।'' इन्दिरा जी की परम मित्र और जानी–मानी कवयित्री अमृता प्रीतम को इन्दिरा जी के जीवन की इस घटना ने दुःखी कर दिया था। वे इस घटना को कभी भूल नहीं पाईं। और जब भी इन्दिरा जी से मिलना हुआ तो उन्होंने इस घटना को हमेशा याद किया। इन्दिरा जी की माता जी ने उनके दुर्भाग्य को दूर करने के लिए परिवार की कुलदेवी के मंदिर में बकरे की बलि चढ़ाई थी और उसका गरम–गरम खून बेटी के माथे मला था। ''इतने वर्षों के बाद भी उस घटना को याद करते ही बकरे के गरम खून का स्पर्श याद आ जाता है और मैं कांप जाती हूं।'' इन्दिरा जी ने एक बार कहा था। इस घटना का उल्लेख उनकी आत्मकथा में भी है।

माता के प्रयत्नों के बावजूद बेटी मेमोनी का भाग्य नहीं बदला था। प्रेम विवाह के डेढ़ साल के अंदर ही मेमोनी के पति मधु आयंगर की सड़क हादसे में मृत्यु हो गई थी। इस दुर्घटना ने उनके जीवन की दिशा बदल दी। वैधव्य का प्रत्यक्ष अनुभव उन्हें हुआ था। एक बार उन्होंने मुझसे कहा था, ''अगर ईश्वर ने मुझे लंबी शादी–शुदा जिंदगी का आशीर्वाद दिया होता तो मैं कुछ भी नहीं बन पाती। मैं तो अपने पति मधु के प्रेम में अपना सर्वस्व भुला चुकी थी। किन्तु मधु की मृत्यु ने मुझे संघर्ष, दुःख और ज्ञान की पगडंडी पर चलने के लिए मजबूर कर दिया। विधवा जीवन का भयावह अकेलापन एवं मनुष्य मात्र की पीड़ा की अनुभूति ने मुझे कलम उठाने की प्रेरणा दी। अगर मेरे जीवन में कलम न होती तो मेरा क्या होता, उसकी कल्पना तक मैं नहीं कर पाती हूं।'' इन्दिरा जी की अभिन्न सहेली ज्ञानपीठ विजेता अमृता प्रीतम ने भी कलम के बारे में ऐसी ही कुछ बात कही थी। आज जब ये दोनों विदुषी सन्नारियां नहीं रहीं तब उनके शब्दों की सार्थकता समझ आ रही है।

कलम इन्दिरा गोस्वामी के लिए विधवा जीवन की प्रताड़ना सहने का एक बड़ा अच्छा हथियार रही। किन्तु हर विधवा को कलम का आशीर्वाद नहीं मिल पाता। हर कोई उनके जैसी कलम की धनी नहीं होती। इसी कारण इन्दिरा जी ने समग्र हिन्दू विधवाओं की पीड़ा, अपमान और अकलेपन को वाचा दी। विधवाओं के प्रति हो रहे अन्याय एवं अत्याचारों को उन्होंने अपने उपन्यास एवं कहानियों के माध्यम से समाज तक पहुंचाया। प्रारंभ के अरसे में इन्दिरा जी ने अपने वैधव्य को एक व्यक्तिगत क्षति के रूप में देखा परंतु आसामी साहित्य के प्रखर विद्वान गुरु श्री लाखेरु जी के निर्देशन में पीएच.डी. करने के लिए वृंदावन में तीन वर्ष तक रहने का अवसर मिलने पर इन्दिरा जी ने वृंदावन धाम की हिन्दू विधवा महिलाओं की अजीबो–गरीब दुनिया को देखा। ये विधवाएं भारत भर से ब्रज में आश्रय लेती थीं। समाज द्वारा तिरस्कृत इन महिलाओं का अंतिम लक्ष्य मोक्ष होता था, और उस अंतिम लक्ष्य को पाने के लिए वे वृंदावन धाम में गरीब, लाचार और अपमान. जनक जीवन बिताती थीं। विधवा जीवन के ऐसे प्रत्यक्ष परिचय ने इन्दिरा जी को अपनी यादगार नवलकथा 'नीलकंठी व्रज' (1986) की प्रेरणा दी। वृंदावन धाम माने कृष्ण की लीलाभूमि। किन्तु ऐसी देवभूमि वृंदावन में बसती हर निःसहाय विधवा स्त्री जीवन–विष का घूंट अपने कंठ में भर कर जी रही थी। ये सारी विधवाएं शिवजी की भांति नीलकंठी थीं, और इन नीलकंठी विधवाओं का आश्रयस्थान था व्रज, जो खुद अब नीलकंठी व्रज बन चुका था।

हिन्दू विधवा जीवन का इससे अच्छा वास्तविक चित्रण हमें शायद ही कहीं मिले। इन्दिरा गोस्वामी के विधवा जीवन पर आधारित इस उपन्यास ने उन्हें यश दिलवाया। वैधव्य के इस उपन्यास पर आधारित एक उड़ीया फिल्म भी बनी जिसका नाम था 'अचाड़्या'। इस फिल्म को 1996 में राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार भी प्राप्त हुआ। लेखिका को ऐसा यश दिलाने वाली कृति का उनके जीवन में कुछ और ही महत्व था। इन्दिरा जी के शब्दों में ''फॉर दि फर्स्ट टाइम आई रियलाइज दैट माई सैडनेस वाज अ पार्ट ऑफ बिगर रियालिटी'', अर्थात् ''जीवन में पहली बार मैं यह समझ पाई कि मेरी निराशा एक विस्तृत वास्तविकता का अंश मात्र थी।'' विधवा जीवन के वास्तविक चित्रण ने इन्दिरा जी को अपने जैसी हजारों विधवाओं के साथ जोड़ा और वे हिन्दू विधवा समुदाय की प्रतिनिधि बन गईं।

'नीलकंठी व्रज' वृंदावन धाम में बसने वाली तीन हिन्दू विधवाओं के जीवन की कहानी है। इनमें से एक विधवा वृद्धा है, दूसरी अधेड़ और तीसरी युवा। पहली दो विधवाएं अपने वैधव्य के प्रति पारंपरिक रुख रखती हैं। अपने संघर्षमय विधवा जीवन को वे अपने आस–पास बसतीं हजारों हिन्दू विधवाओं के प्रतिनिधि के रूप में देखती हैं। किन्तु इस उपन्यास की तीसरी विधवा कुछ अलग है। उसका नाम है सौदामिनी। युवा और सुंदर सौदामिनी बाल विधवा है। किन्तु वह पारंपरिक हिन्दू विधवा की त्यागमूर्ति बनकर जीने को तैयार नहीं। उसका मन विद्रोही है और इसी कारण वह विधवा जीवन के नियम तोड़कर एक ईसाई युवक से प्रेम करती है। माता–पिता के घोर विरोध के बावजूद सौदामिनी नहीं मानती है। वह कहती है ''मैं कोई देवी नहीं, मेरी अपनी भी कई इच्छाएं हैं।'' अंत में एक रात युवा विधवा सौदामिनी यमुना नदी पर तैर रही नौका पर सवार होकर अपने प्रियतम के साथ जिंदगी बिताने को निकल पड़ती है। दोनों प्रेमी मिल पाए या नहीं, उसकी बात उपन्यास नहीं करता। किन्तु अचानक ही सौदामिनी की नाव यमुना में डूब जाती है। इस नवलकथा की विद्रोही विधवा सौदामिनी में इन्दिरा गोस्वामी एवं अन्य हजारों युवा विधवाओं की परछाईं हाजिर है।

.....

इन्दिरा गोस्वामी की हृदयद्रावक आत्मकथा 'एन अनफिनिश्ड ऑटोबायोग्राफी' तीन खंडों में विभाजित है और इन तीन खंडों में से एक खंड है 'द सिटी ऑफ गॉड'। इस खंड में लेखिका वृंदावन धाम में रहने का अपना अनुभव एवं आस–पास बसती विधवाओं के कठिन जीवन का वास्तविक वर्णन प्रस्तुत करती है। इन गरीब विधवाओं की एकमात्र इच्छा योग्य अग्निदाह पाने की है। इसके लिए वे पैसा–पैसा जोड़ती हैं। ऐसी विधवाओं को समाज के अत्याचारों एवं ठगी का सामना भी करना पड़ता है। प्रस्तुत खंड अनेक अत्याचारों एवं ठगी की घटनाओं का वर्णन करता है।

मधु आयंगर की विधवा के रूप में इन्दिरा जी ने खुद भी समाज की निर्दयता का अनुभव किया था। हिन्दू समाज में विधवा के प्रति कैसा टैबू है, उसकी बात करते हुए इन्दिरा जी दो घटनाएं लिखती हैं –एक घटना है उनका अपना अनुभव तो दूसरी है उनकी विधवा बुआ का अनुभव। विधवा बेटी इन्दिरा को उसके अपने परिवार ने एक

अतिथि संपादक

बार भोजन की पंगत में से उठा दिया था। इस ब्राह्मण परिवार का मानना था कि विधवा पुत्री को पंगत में बैठकर खाने का अधिकार नहीं था। उसी परिवार की एक अन्य बेटी थी इन्दिरा जी की बुआ। उन्हें भी अपने परिवार का बड़ा कड़वा अनुभव हुआ था। इन्दिरा जी लिखती हैं, ''मेरी बुआ के पति के स्वर्गवास के दिन उनके मैके से ढांढस बंधवाने गई विधवा स्त्रियों ने उन्हें सांत्वना देने की बजाय और दुःखी कर दिया था। बुआ जी की हाजिरी में इन औरतों ने परिवार की शादीशुदा युवा स्त्रियों को इस विधवा के आस–पास न आने को कहा था। उतना ही नहीं, बुआजी की बेटी को उनके सामने ही कहा था, ''तू अपनी मां को नहीं छूना, वो अभी ही विधवा हुई है। अपने वैधव्य के श्राप से वो तुझे भी दूषित कर देगी।''

इन्दिरा गोस्वामी का विधवा जीवन का ऐसा सशक्त चित्रण उनके प्रत्यक्ष अनुभव में से प्रस्फुरित होता है। गिरीबाला, सौदामिनी, दमयंती जैसी अनेक यादगार विधवा नायिकाएं लेखिका के अपने खुद के प्रतिबिंब के समान हैं। हिन्दू विधवा की असह्य स्थिति को समझने के लिए इन्दिरा गोस्वामी के साहित्य को पढ़ना पर्याप्त है।

'मंजरी' के विधवा विशेषांक का प्रतिनिधि लेख इन्दिरा गोस्वामी के विषय में हो यह अति योग्य है। विधवा जीवन की पीड़ा को शब्दों में संजोनेवालीं एवं विधवा मन के विद्रोह को उद्घटित करने वालीं प्रिय मित्र इन्दिरा गोस्वामी को सलाम।

डॉ. रंजना हरीश

अनुक्रमणिका

संकल्पना

हमारी बात : संपादकीय

अतिथि संपादक : इन्दिरा गोस्वामी का साहित्य विश्व और हिन्दू विधवा जीवन — डॉ. रंजना हरीश 1.

पृष्ठभूमि : ...तब कलंक नहीं था वैधव्य 5.

लघुकथा : सुख के मायने — पद्मश्री उषाकिरण खान 8.

बदलाव : मिथकों को बदल तोड़ रहीं रुढ़ियों को — डॉ. गिन्नी श्रीवास्तव 9.

विशेष : उभरती और बढ़ती हुईं श्रवण कुमारियां — कमला भसीन 13.

सुरक्षा : पति की मौत के बाद सामाजिक सुरक्षा — गायत्री शर्मा 15.

लघुकथा : चाचीमाय — आनंद माधव 18.

कानून : कानून की नजर में विधवाएं 19.

हालात : वर्तमान स्थिति व भविष्य की रूपरेखा —प्रो. विभूति पटेल 21.

अनदेखी : ये अदृश्य औरतें —दीपिका झा 24.

वार विडोज हाफ विडोज : .....मगर इनकी जंग तो जारी है! 27.

विश्व मंच : हुकूमतें अलग–अलग मगर हालात एक हैं 30.

श्रोत

https://www.opendemocracy.net/5050/margaret-owen/conflict-widows-agents-of-change-and-peacebuilding
http://www.aljazeera.com/news/asia/2013/09/dilemma-kashmir-half-widows-201392715575877378.html
http://www.claws.in/1038/army-widows-the-battle-is-yet-not-over-pratibha-singh.html#sthash.K7NdybOW.dpuf
http://www.deccanherald.com/content/285179/condition-widows-orphans-jampk-miserable.html
http://blogs.tribune.com.pk/story/15907/why-the-un-fails-humanity-in-kashmir/
https://www.widowsrights.org/researchdocumentkbrewerr0911.pdf
http://blogs.tribune.com.pk/story/28289/the-sin-of-being-a-widow-in-this-world/
https://www.kaanoon.com/indian-law/does-a-widow-have-rights-in-her-husbands-property/
https://www.makaan.com › makaaniq › Legal
http://www.claws.in/1038/army-widows-the-battle-is-yet-not-over-pratibha-singh.html
http://encyclopedia.1914-1918-online.net/article/war_widows
Widows Rights International
www.shodhganga.inflibnet.ac.in
www.yourarticlelibrary.com
www.google.com
www.hindustantimes.com
www.timesofindia.com
www.indiainfoline.com
Commission on the Status of Women – 61st Session
www.theloombafoundation.org
www.un.org/womenwatch

Images from

www.google.com
https://in.pinterest.com

...तब कलंक नहीं था वैधव्य

'विधवा वो है जिसका शरीर तो जीवित हो मगर उसकी इच्छाएं मर चुकी हों।' हमारे देश में पति की मौत के बाद स्त्री के जीवन का यही अर्थ लगाया जाता है। विवाह के बाद स्त्रियों से अपेक्षा की जाती है कि या तो उनकी मृत्यु पति की मृत्यु से पहले हो जाय अथवा उसके साथ, लेकिन अगर पति की मौत पहले हो जाय तो फिर पत्नी को कड़े सामाजिक नियमों का पालन करना पड़ता है। हैरानी की बात है कि तथाकथित सभ्य समाजों में विधवा को लेकर जितने नियम बनाए गए हैं, पुरातन समाजों में उतने नियम नहीं थे।

वैदिक युग में नहीं थी बंदिशें

'शोधगंगा' के अध्ययन बताते हैं कि ईसा पूर्व चौथी सदी में स्त्रियों की स्थिति कहीं अच्छी थी। 1700 से 500 ईसा पूर्व को महिलाओं के लिए 'स्वर्ण युग' कहा जाता है। वैदिक आर्यों में सती प्रथा का चलन नहीं था। वैदिक युग में विधवाओं को किसी भी समारोह में शामिल होने से नहीं रोका जाता था और न ही उन्हें अशुभ मानकर उनका अपमान किया जाता था। उन्हें परिवार की अन्य स्त्रियों के समान जीवन जीने का अधिकार प्राप्त था। ना तो उन्हें कलंक माना जाता था और न ही उनका मुंडन कराने का कोई नियम था। वैदिक और उत्तर वैदिक काल में तो उन्हें पुनर्विवाह करने की भी स्वतंत्रता थी। मनुसंहिता में भी विधवा को 'सती' बनने या उनका मुंडन कराने के बारे में नहीं कहा गया, अलबत्ता ये जरूर कहा गया कि ''एक अच्छी पत्नी वो है जो पति की मौत के बाद सदैव पवित्र बनी रहे, यदि ऐसा हो तो पुत्र न होने पर भी उसे स्वर्ग की प्राप्ति होती है।''

महाभारत काल में बिगड़े हालात

300 ईसा पूर्व के बाद से हिंदू समाज में स्त्रियों को कमजोर करने और विभिन्न परंपराओं तथा नियमों के जरिये उन्हें हाशिये पर धकेलने की कोशिश की जाने लगी। जाहिर है विधवाएं इसकी सबसे आसान निशाना बनीं। विधवा को अमंगल करने वाली माना जाने लगा और उन्हें हर अच्छे अवसर और समारोह से दूर रखा जाने लगा। विधवा स्त्रियों को रंगीन साड़ी पहनने, श्रृंगार करने, बिंदी–सिंदूर लगाने और विवाह समारोहों से दूर रखा जाने लगा। तर्क दिया गया कि इन चीजों को अपनाने से स्त्री में भोग की लालसा जाग सकती है और इनसे दूसरे पुरुष उसकी ओर आकर्षित हो सकते हैं। विधवा के लिए हमेशा शोकग्रस्त रहना और पति की मौत का शोक मनाते रहना अनिवार्य बना दिया गया। नारी को 'अबला' कहा गया और पुरुष को 'स्वामी'। ऐसे में स्पष्ट है कि अगर स्वामी की मृत्यु हो जाय तो पत्नी की रक्षा करने वाला, उसे सहारा देने वाला नहीं रहेगा और इस प्रकार वह दुनिया में

सबसे अधिक 'अभागी' हो जाएगी। ऐसा माना गया कि पति की मृत्यु के बाद पत्नी का सम्मान सुरक्षित नहीं रहता और इसलिए उनके जान देने के कई उदाहरण इतिहास में भरे हैं। महाभारत में कृष्ण की मृत्यु के बाद उनकी पत्नियों के सरस्वती नदी में कूद कर जान देने और और कौरवों की विधवाओं की सामूहिक मृत्यु का जिक्र आता है।

19वीं सदी से बदलने लगी सूरत

पिछली दो सदियों में सती से लेकर विधवा पुनर्विवाह तक कई बदलाव समाज ने देखे हैं। देश में सती की सबसे पहली घटना का जिक्र यूनानी यात्रियों ने चौथी सदी में उत्तर भारत के लोगों से किया था। कालांतर में ब्रिटिश सरकार ने 1829 में कानून बनाकर सती प्रथा का उन्मूलन करने की कोशिश की। स्वतंत्र भारत में 1987 में राजस्थान सरकार ने इसके विरुद्ध कानून बनाया जिसे 1988 में भारत सरकार ने पूरे देश में लागू कर दिया। उसके बाद से कानून लगातार इस दिशा में काम कर रहा है लेकिन फिर भी पति की चिता में जल कर मर जाने की इक्का–दुक्का घटनाएं सामने आ जाती हैं। इसी प्रकार 1856 में पंडित ईश्वरचंद्र विद्यासागर के प्रयासों से हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम लागू कराया जा सका। इसने पति की मौत के बाद विधवा पत्नी की संपत्ति के अधिकारों को सुरक्षित किया। उक्त अधिनियम में विशेषकर बाल विधवाओं के लिए प्रावधान किये गये क्योंकि उस समय देश में बाल विवाह का चलन था और कई बच्चियां युवा होने से पहले ही विधवा हो जाती थीं जिनका भरण–पोषण गंभीर समस्या बन जाती थी। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 ने मृत पति की संपत्ति में उसकी विधवा को हिस्सा दिया तो 2008 में उच्चतम न्यायालय ने फैसला दिया कि यदि कोई विधवा दोबारा विवाह करती है तो भी उसे अपने पूर्व पति की संपत्ति से वंचित नहीं रखा जा सकता।

इस तरह हम पाते हैं कि समय और समाजों के बदलने के साथ–साथ विधवाओं को लेकर कानून और नजरिया दोनों में बदलाव आया है। हालांकि जितने कानून बनाए गए हैं उनका सही अनुपालन नहीं हो रहा है और न ही जरूरतमंदों तक संपूर्ण मदद पहुंच पा रही है, फिर भी देश के अलग–अलग हिस्सों में विधवाओं की स्थिति भी भिन्न–भिन्न है। कई समाज उन्हें तिरस्कृत कर रहे हैं तो कई उन्हें पुनर्विवाह की स्वतंत्रता भी दे रहे हैं। वर्तमान में हम देश में विधवाओं की समस्याओं को पांच भिन्न दृष्टिकोणों से जांच सकते हैं – संपत्ति के अधिकार, पुनर्विवाह का निषेध, सामाजिक प्रतिबंध, हिंसा और आर्थिक तंगी।

कानून में मिली सुरक्षा

वर्ष 2015 में उच्चतम न्यायालय ने विधवाओं के पुनर्विवाह के बाद भी पूर्व पति की संपत्ति में उनके अधिकार को पुनर्स्थापित करते हुए कहा कि हिंदू विधवाओं के लिए गुजारे का अधिकार केवल एक औपचारिकता भर नहीं है बल्कि यह एक आध्यात्मिक और नैतिक अधिकार भी है और अपने पति की संपत्ति पर 'परम अधिकार' के दावे के लिए वह कानून का सहारा ले सकती है। आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा एक विधवा

के पक्ष में दिये आदेश को बरकरार रखते हुए, जिसमें उसने अपने पति द्वारा सौंपी गई संपत्ति को अपने एक संबंधी को हस्तांतरित कर दिया था, उच्चतम न्यायालय ने कहा कि उक्त संपत्ति महिला का 'परम अधिकार' है और वह उसे वसीयत में देने के लिए स्वतंत्र है। कोर्ट ने कहा ''यह भली प्रकार से अवगत है कि हिंदू कानून के अनुसार, पति का यह व्यक्तिगत दायित्व है कि वह अपनी पत्नी की देखभाल करे और अगर पति के पास कोई संपत्ति है तो पत्नी को अधिकार है कि वह उस संपत्ति से अपना गुजारा करे।''

संयुक्त राष्ट्र के कन्वेंशन ऑन दि एलिमिनेशन ऑफ ऑल फॉर्म्स ऑफ डिस्क्रिमिनेशन अगेंस्ट वीमेन (सीईडीएडब्ल्यू), 1979 भी कहता है कि दुनिया में ऐसे कई देश हैं जहां उत्तराधिकार और संपत्ति के कानूनों में महिलाओं के साथ भेदभाव किया जाता है। इस प्रवृत्ति के कारण संभव है कि पति की मौत के बाद उसकी विधवा को बेटों की तुलना में अथवा पत्नी की मौत होने पर विधुर को मिलने वाले लाभांश की तुलना में कम हिस्सा प्राप्त हो। कुछ उदाहरणों में विधवा को पति की संपत्ति पर सीमित अधिकार ही मिल पाता है जो विवाह के समय किये गये वादों को पूरा नहीं करते हैं। ऐसे प्रावधानों तथा भेदभाव को समाप्त किया जाना चाहिए।

अकेले हमारे देश में ही अलग–अलग हिस्सों में औरतों और विधवाओं को लेकर ऐसे कानून मौजूद हैं जो स्वतंत्रता और समानता के सरकारी दावों को कभी पूरा नहीं होने देंगे। संयुक्त राष्ट्र ने एक 2014 में एक सूची जारी कर उन कानूनों को सामने रखा है जो भारत में औरतों को मर्दों के सामने कमजोर बनाते हैं।

- गोवा में अगर पत्नी 30 वर्ष तक की उम्र तक बेटे को जन्म नहीं देती तो हिंदू पुरुष दूसरी शादी कर सकता है।
- संपत्ति और उत्तराधिकार के कानून राज्य के हिसाब से भिन्न हैं।
- हिंदुओं में पत्नी की मौत हो जाने पर उसकी संपत्ति के बंटवारे और पति की मृत्यु के बाद उसकी संपत्ति के बंटवारे में अंतर है।
- पति और बच्चों के न होने पर, पति का उत्तराधिकारी पत्नी की संपत्ति का उत्तराधिकारी बन सकता है।
- यहां तक कि अगर ससुराल में महिला के साथ बुरा बर्ताव किया जाता हो, तो भी उसकी मृत्यु के बाद उसकी संपत्ति पति, पति की मां और पिता को ही मिलेगी, न कि महिला की मां और उसके पिता को।
- पारसी कानून के मुताबिक, गैर पारसियों को संपत्ति का अधिकार नहीं होता है। यदि कोई पुरुष गैर पारसी महिला से विवाह करता है, तो उस महिला को, चाहे वह शादीशुदा हो या विधवा, पति की संपत्ति में कोई अधिकार नहीं मिलता है।

पृष्ठभूमि

6 अप्रैल, 2014 को वृंदावन में विधवाओं पर हुए राष्ट्रीय विमर्श में प्रस्तुत कुछ सुझाव

वृंदावन में आयोजित राष्ट्रीय विमर्श विधवाओं की समस्याओं को राष्ट्रीय स्तर पर उठाने के लिए गिल्ड फॉर सर्विस और यूएन वीमेन की एक साझा पहल थी। इसका उद्देश्य व्यावहारिक राष्ट्रीय कार्य योजना का खाका खींचना और सरकार के एजेंडे में विधवाओं के अधिकारों को प्राथमिकता के साथ शामिल कराना था। विमर्श के दौरान हाफ विडो, वार विडो, किसानों की विधवाओं और धार्मिक विधवाओं, सभी के मुद्दों को समान रूप से रखा गया। राष्ट्रीय विमर्श में विधवाओं की स्थिति को सुधारने के लिए कुछ अनुशंसाओं को सामने रखा गया जिन्हें संक्षेप में यहां दिया जा रहा है :

1. चूंकि भारत में एक बड़ी संख्या विधवाओं की है, इसलिए एक ऐसी नीति की आवश्यकता है जो सभी योजनाओं और कार्यक्रमों के लिए पथ प्रदर्शक का काम करे। नीति में सामाजिक और आर्थिक रूप से पिछड़ी हुईं विधवाओं पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाय तथा साथ ही इसमें अल्पसंख्यक समुदाय की विधवाओं और उनके बच्चों को भी स्थान दिया जाय। शारीरिक अथवा मानसिक रूप से विकलांग अथवा असाध्य बीमारियों से ग्रस्त विधवाओं और उनके परिवारों को भी नीति में शामिल किया जाना चाहिए। विधवाओं के पुनर्विवाह को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए तथा दोबारा विवाह के बाद पहले से मिल रहे सभी सरकारी अनुदान जारी रहने चाहिए। सामाजिक प्रथाओं, सांस्कृतिक तौर–तरीकों और पर्सनल कानूनों को विधवाओं के निर्णय लेने अथवा उत्तराधिकार के अधिकारों के मार्ग में बाधा नहीं बनना चाहिए। नीति में यह सुनिश्चित करना चाहिए कि सरकार द्वारा मिलने वाले सभी लाभ सीधे विधवाओं तक पहुंचें।

2. विधवाओं के अधिकारों की रक्षा करने के लिए 'एससी/एसटी प्रीवेंशन ऑफ एट्रॉसीटिज एक्ट' की तर्ज पर कानून बनाया जाना चाहिए। साथ ही विधवाओं के साथ किये जाने वाले अमानवीय, क्रूर, घृणित और भेदभावपूर्ण धार्मिक तथा सांस्कृतिक प्रथाओं को समाप्त करने की दिशा में कठोर कदम उठाया जाना चाहिए।

3. सभी विधायी निकायों में महिलाओं के लिए 33 फीसद सीटें आरक्षित किये जाने के प्रस्ताव में 8 फीसद आरक्षण विधवा स्त्रियों के लिए भी होना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि विधवाओं को निर्णय लेने के सर्वोच्च स्तर तक प्रतिनिधित्व दिया जा रहा है।

4. विवादग्रस्त अथवा अशांत क्षेत्रों में आर्म्ड फोर्सेस स्पेशल पावर्स एक्ट और पब्लिक सेफ्टी एक्ट की मौजूदगी अथवा सीमित मौजूदगी की समीक्षा करना। इस बात को जांचते रहने की जरूरत है कि जो कानून लोगों की सुरक्षा करने के लिए बनाए गए हैं, वे उनके अधिकारों का हनन न करें।

5. भारत सरकार को 'इंटरनेशनल कन्वेंशन फॉर दि प्रोटेक्शन ऑफ ऑल पर्सन्स फ्रॉम इनफोर्सड डिसअपीयरेन्स' को अवश्य ही स्वीकृति देनी चाहिए।

6. जबरन उठाये गये लोगों से संबंधित विशेष विधेयक पारित किया जाना चाहिए। किसी विशेष अथवा सभी परिस्थितियों में जबर्दस्ती अगवा किये गये लोगों को परिभाषित करते समय उनके अधिकारों के बारे में सतर्क रहने की जरूरत है। इसके तहत पकड़े जाने के बाद उन्हें केवल सरकार द्वारा स्वीकृत स्थानों में ही रखे जाने और परिवार के साथ बातचीत करने देने के अधिकारों की रक्षा की जानी चाहिए।

7. भारतीय और अंतरराष्ट्रीय समुदाय को कश्मीर की 'हाफ विडोज' के मामलों को आवश्यक रूप से मान्यता देनी चाहिए। इसके बारे में लोगों के बीच जागरूकता फैलाये जाने की जरूरत है। यह केवल संदेह के आधार पर अथवा वास्तविक आतंकियों के मारे जाने या लापता होने का मामला नहीं है बल्कि इससे कहीं अधिक गंभीर मुद्दा है। अगर राज्य आरोपी आतंकियों के मानवाधिकारों को मान्यता नहीं देते हैं तो उनसे आम नागरिकों के मानवाधिकारों को मान्यता देने की अपेक्षा करना व्यर्थ होगा। लोगों को संदेह के आधार पर जबरन उठा लेना न्याय का मजाक बनाना होगा, मानवाधिकारों का उल्लंघन और हमारे लोकतांत्रिक सिद्धांतों पर धब्बा होगा।

8. आजीविका मिशन के नियमों में संशोधन की जरूरत है। प्रशिक्षण पाने के लिए उम्र सीमा को बढ़ाकर 50 तक किया जाना चाहिए तथा विधवाओं के लिए शैक्षणिक योग्यता को घटाना चाहिए। ज्यादातर व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रमों में शामिल होने के लिए न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता 10वीं और 8वीं पास होती है, लेकिन इसके कारण बहुत सी कम पढ़ी–लिखी और निरक्षर विधवाएं लाभ पाने से वंचित रह जाती हैं।

9. विवाह के समय पति और पत्नी दोनों के नाम से जमीन और संपत्ति का निबंधन कराने की नीति बनाई जानी चाहिए। इससे विधवाओं को आर्थिक रूप से सशक्त होने में बड़ी मदद मिलेगी।

10. बुजुर्गों के बारे में अवधारणाओं को बदलने तथा लोगों में जागरूकता लाने के लिए मीडिया को जोड़ना होगा तथा संबंधित मुद्दों पर बहस तेज करनी होगी।

लघुकथा

सुख के मायने

पद्मश्री उषाकिरण खान

(हिन्दी और मैथिली की प्रख्यात लेखिका। 2011 में मैथिली उपन्यास 'भामती : एक अविस्मरणीय प्रेमकथा' के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित तथा 2015 में पद्मश्री से सम्मानित। मगध विश्वविद्यालय के बी. डी. कॉलेज में लंबे अरसे तक प्राचीन भारतीय इतिहास और पुरातत्वशास्त्र का अध्यापन किया और वर्ष 2015 में विभाग प्रमुख के पद से सेवानिवृत्त हुईं। उनके हिन्दी नाटक 'उगना रे मोरे कतय गेलै' ने देश के कई थियेटरों में डायमंड जुबली मनाई)

गांव के बच्चे–बूढ़े सभी प्रसन्न थे उस दिन जिस दिन वीणा की शादी हुई थी। वीणा एक वंचिता नानी की वंचिता नातिन। नानी के पास भी दो बीघे जमीन, खरपैल घर और एकमात्र नातिन के सिवा कुछ न था। बांस के कोंपल की तरह बढ़ रही वीणा का रूप सौंदर्य देखकर एक सुभ्यस्त गृहस्थ ने उसे अपनी बहू बनाया। लोग कहते हैं कि उनकी नजर नानी की उर्वर जमीन पर भी थी। परन्तु ऐन मधुश्रावणी के बीच एक दुर्घटना में उसका पति काल कवलित हो गया। मुआवजा तथा शेष राशि लेने वीणा और उसकी सास गईं। पता नहीं क्या सोचकर सास ने ही सफेद साड़ी में चूड़ीविहीन हाथों से अंगूठा लगाकर चेक ले लिया। वीणा मुलुर–मुलुर ताकती रही। गांव में वह उनकी खरीदी हुई गुलाम ही तो थी। एक दिन गांव के एक मामा नानी की सेवा के लिए बुला ले गए। नानी के पास आकर थोड़ी आफियत हुई। पर पूरा जीवन सूना था।

झरिया में एक और हमउम्र लड़की थी जिससे वीणा ने दो दिन में ही सहेलियाना बढ़ा लिया। उसके साथ भी यही कृत्य हुआ था। जब सब वहां से जा रहे थे, वह लड़की कहीं गायब थी। काफी खोज हुई, नहीं मिली। सास–ससुर मन ही मन खुश हुए–चलो बला टली। वीणा बहुत दिनों तक सोचती रही, वह गई कहां?

रीता पहले तो पेड़ों के पीछे छुप गई थी, फिर जैसे ही उसे पता चला सब चले गए तब दौड़कर बैंक की महिला मैनेजर के पास गई और उनका पैर पकड़ लिया कि वे उसे अपने साथ ले चलें। कुछ विचार कर मैनेजर ने उसे साथ कर लिया। आवास पर आई तब रीता ने उसे कहा कि उसके तो कोई नहीं, सास बहुत मारपीट करती है, आप अपने साथ रख लें, आपकी सेवा करेगी। मैनेजर साहिबा ने समझाया कि ढेर सारे रुपये और पेंशन सास ले गई है, चाहे तो धोखाधड़ी का केस कर दे। परन्तु रीता तैयार नहीं हुई। वह उनके यहां रहकर खाना बनाती, खाली समय में कुछ पढ़ती। मैनेजर ने उसे सम्मानित जीवन दिया। एक कमरे में उसे एक व्यवस्थित संसार दिया। उसकी रुचि के अनुसार उसे पौधा संरक्षण का कोर्स करवा कर किसी संस्था से जोड़ दिया। जैसा कि होता है, मैनेजर की बदली हुई, रिटायर हुईं पर रीता स्थाई रूप से शहर में रहकर कार्यक्रमों में तल्लीन हो गईं। रीता का अपना उपवन भी हो गया। पौधों को वह संतान की तरह संभालती।

वीणा के चचेरे मामा के पुत्र और पुत्रवधू इसे बहुत प्यार करते थे। उनकी नौकरी गांव से दूर एक शहर के कॉलेज में हो गई थी। बहू को बच्चा होने वाला था। नानी से पूछकर वीणा को ममेरे भाई के यहां पहुंचा दिया गया। वीणा अपने कार्य और स्वभाव से सबों का दिल जीत लेती। यहां भी प्रोफेसर भैया–भाभी और दो बच्चे इसके बिना नहीं रह सकते थे। कभी उन्होंने इसे तकलीफ न होने दिया। अब नानी नहीं रही। उसका खेत खुद मामा देखते, अनाज के पैसे बैंक में जमा कर देते।

एक दिन रीता से अनायास वीणा की मुलाकात हो गई। बीस वर्षों का अंतराल था फिर भी दोनों एक–दूसरे को पहचान गईं। पहले तो गले मिलकर खूब रोईं। फिर रीता ने अपनी कहानी सुनाई। उसने विवाह भी अपने सहयोगी से कर लिया था। वीणा के मन में सूना. पन भर गया। वह किसी दुःख में नहीं है पर क्या अंदर से एकाकी नहीं है? लेकिन कितनी विधवाएं इतनी भी सुखी हैं?

मिथकों को बदल तोड़ रहीं रुढ़ियों को

2011 की जनगणना के अनुसार, भारत में 4,32,61,478 विधवाएं हैं। यह संख्या दुनिया के कई देशों की कुल जनसंख्या से भी अधिक है, जैसे कि –दक्षिण अफ्रीका, कनाडा, आस्ट्रेलिया और अन्य कई। विधवा स्त्रियों की तुलना में देश में विधुर पुरुषों की संख्या काफी कम है जो कि करीब 1,22,77,229 है। आम तौर पर पत्नी की मौत के बाद पुरुष दोबारा शादी कर लेते हैं जबकि विधवाओं के दोबारा शादी करने के उदाहरण कम ही सामने आते हैं। इसके अलावे जनसंख्या के आंकड़े बताते हैं कि महिलाएं पुरुषों के मुकाबले अधिक जीती हैं और यह भी विधवाओं की संख्या अधिक होने की एक वजह है।

भारत में विधवाओं की संख्या इतनी अधिक होने के बाद भी उनका जीवन और उनकी समस्याएं आश्चर्यजनक रूप से छिपी हुई रहती हैं। कुछ संगठनों, जैसे कि गिल्ड ऑफ सर्विस, ने मोहिनी गिरी के जुझारू नेतृत्व में, विधवाओं के लिए एक आश्रम खोला है। गिल्ड ऑफ सर्विस उत्तर प्रदेश के वृंदावन में काम करता है। इसके अलावे कुछ अन्य संगठन मंदिरों के इस नगर में विधवाओं के लिए भोजन और साड़ियां बांटने जाया करते हैं। मंदिरों के नगर वृंदावन में देश की कुल विधवाओं का केवल कुछ प्रतिशत ही रहता है लेकिन उनका जीवन उनके प्रति समाज की घिसी–पिटी सोच को जाहिर कर देता है, ''वे भिक्षुक हैं'', ''वे अपना समय मंदिरों में भजन गाकर बिताती हैं'', ''वे सफेद वस्त्र पहनती हैं'', ''वे कमजोर और दयनीय हैं'', ''उन्हें उनके घरवालों ने छोड़ दिया है।'' जिन लोगों ने उन्हें करीब से जाना है, उन्होंने देखा है ''उनका यौन उत्पीड़न होता है'', ''सभी उम्र की औरतों के साथ'', ''उनके पास पैसे नहीं हैं चाहे भले ही वे पहले स्कूल शिक्षिका रही हों'', ''वे अक्सर मानसिक रोग से ग्रस्त हो जाती हैं जिसके पीछे परिवार द्वारा छोड़ दिये जाने, अकेलापन और जीने का संकट जैसे तनाव कारण बनते हैं।''

डॉ. गिन्नी श्रीवास्तव

(मूल रूप से कनाडा की नागरिक डॉ. गिन्नी श्रीवास्तव ने अपना पूरा जीवन भारत की विधवाओं तथा एकाकी महिलाओं के कल्याण में लगा दिया। वे उदयपुर की संस्था नेशनल फोरम फॉर सिंगल वीमेन्स राइट्स की प्रमुख हैं। उनके अथक प्रयासों को देखते हुए 2005 में उन्हें नोबेल शांति पुरस्कार के लिए 1000 महिलाओं की श्रेणी में नामित किया गया था। उन्हें 2014 का रानी रुद्रमादेवी पुरस्कार दिया गया जो उन्हें माननीय राष्ट्रपति प्रणव मुखर्जी ने प्रदान किया।)

कुछ वैध रुढ़िवादी धारणाएं

भारत के छोटे शहरों, नगरों और गांवों में बड़ी संख्या में रहने वाली निम्न आय वाली विधवा स्त्रियों के लिए ये कुछ वैध रुढ़िवादी धारणाएं हैं –

● **''उन्हें उनके परिवार ने छोड़ दिया है''** – विधवाओं की एक बड़ी संख्या के मामले में यह सत्य है कि उनके पति की मौत के बाद परिवार वाले उनकी जिम्मेदारी लेने के लिए तैयार नहीं होते हैं और उन्हें घर में जगह देने से इंकार कर देते हैं। ससुराल वाले विधवा बहू को अपने घर में देखना नहीं चाहते हैं तो पिता के घर में भी यही सोच होती है कि ''हमने उसकी शादी कर दी है'', तो उन्हें ज्यादा समय तक अपने यहां आश्रय नहीं दे सकते। कुछ समय के लिए– जब तक माता–पिता जीवित रहते हैं–विधवा बेटी और उसके बच्चों को पैतृक घर में पनाह मिल जाती है। लेकिन जैसे ही माता–पिता की मृत्यु हो जाती है, इसकी कोई गारंटी नहीं कि उसके भाई और परिवार वाले विधवा बहन को अपने घर में जगह दे ही देंगे। यह मिथक कि ''भारतीय परिवार अपने लोगों की परवाह करते हैं'' बहुत सारे मामलों में सच नहीं है।

● **"उनका यौन शोषण होता है" –** बड़ी संख्या में औरतें यौन शोषण के डर अथवा इस सच्चाई के साथ जीती हैं। दुर्भाग्यवश, अगर ससुराल वाले विधवा बहू को अपने साथ रखने के लिए तैयार भी होते हैं तो घर के सारे कामकाज करने के अलावा उसे देवर या कई बार ससुर से भी यौन उत्पीड़न का खतरा बना रहता है। जब कोई विधवा स्त्री समाज में बाहर निकलती है तो कई पुरुष समझते हैं कि अब वह कमजोर हो गई है क्योंकि कोई मर्द उसके पीछे खड़ा रहने वाला नहीं है, इसलिए वो सेक्स करने के लिए 'उपलब्ध' है, बल्कि कई लोग तो ये भी समझते हैं कि वह स्त्री सेक्स करना चाहती है ! इसके पीछे समाज में औरतों की भूमिका (मां और घर संभालने वाली) को लेकर दकियानूसी धारणाएं और पितृवादी सोच हैं।

● **"वे सभी उम्र की हैं"–** देश में 10 से 14 वर्ष के बीच 63,647 और 15 से 19 वर्ष के बीच की 1,30,484 विधवाएं हैं–इस प्रकार कुल 1,94,131 बाल विधवाएं मौजूद हैं। जनगणना के आंकड़े बताते हैं कि कुल विधवाओं में से 58.31 प्रतिशत 60 वर्ष या उससे अधिक की हैं। और इसके अलावा लाखों और करोड़ों विधवाएं 20 से 59 वर्ष के बीच हैं!

● **"वे अक्सर मानसिक रोग से ग्रस्त हो जाती हैं जिसके पीछे परिवार द्वारा छोड़ दिये जाने, अकेलापन और जीने का संकट जैसे तनाव कारण बनते हैं"** –यह सच है, परिवार द्वारा छोड़ दिये जाने, बहिष्कृत कर देने, जीने का संकट, भोजन, आश्रय और खुद पर आश्रित बच्चों की जिम्मेदारी के कारण ज्यादातर विधवाएं मानसिक संताप से गुजरती हैं। कई बार वे सिरदर्द और सामान्य पीड़ा झेलती हैं तो कई बार अवसाद की शिकार हो जाती हैं।

उपरोक्त धारणाएं विधवाओं को लेकर आम हैं और वे कई मायनों में सत्य भी हैं। हालांकि समाज में उनसे जुड़े कई 'मिथक' (एक विश्वास जो सत्य नहीं है) भी हैं, जिनमें से कुछ का जिक्र मंदिरों के नगर के संदर्भ में उपर्युक्त पंक्तियों में किया गया है और कुछ का अन्य संदर्भों में।

विधवाओं के बारे में टूटते मिथक

● **"वे भिक्षुक होती हैं", "वे मंदिरों में भजन गाकर अपना समय काटती हैं", "उनके पास धन नहीं होता, भले ही वे पहले शिक्षिका रही हों" –** वास्तव में बहुत कम विधवाएं भिक्षुक होती हैं या वेश्यावृत्ति करती हैं। निम्न आय वाली सभी विधवाएं या तो कहीं काम करती हैं या रोजगार, जैसे–दिहाड़ी मजदूरी, खेती, पशुपालन का काम, घरेलू नौकर–दाई का काम, सिलाई का काम, छोटी दुकानों में कुछ बिक्री करना, टोकरी बनाना या बच्चों की देखभाल का काम आदि–ताकि वे अपना और अपने बच्चों का गुजारा चला सकें। कुछ बुजुर्ग विधवा औरतें घर में पूजा या नमाज जरूर करती हैं लेकिन इसमें उनके दिन का केवल कुछ हिस्सा ही गुजरता है। विधवाएं भी अपनी जिंदगी चलाने के लिए काम करती हैं–उन्हें करना ही पड़ता है। एक अध्ययन में बताया गया कि 2001 की जनगणना में जहां ग्रामीण क्षेत्रों में काम करने की उम्र वाली केवल 33 प्रतिशत महिलाएं ही कार्यबल का हिस्सा थीं, वहीं विधवाओं और अकेली महिलाओं पर किये गये एक सर्वे में पाया गया कि 89.6 प्रतिशत विधवा और अकेली महिलाएं आर्थिक कार्यबल में शामिल थीं! और वे बढ़ती उम्र में भी अच्छा काम कर रही थीं।

विधवाओं को दी जाने वाली पेंशन की राशि हर राज्य के हिसाब से अलग–अलग है, फिर भी जो सबसे ज्यादा है वो एक हजार रुपये है–लेकिन यह भी काफी नहीं है। कई राज्य तो अभी भी 500 और 700 रुपये मासिक पेंशन दे रहे हैं।

● **"वे सफेद वस्त्र पहनती हैं" –** सभी विधवा स्त्रियां सफेद वस्त्र नहीं पहनती हैं। यह उच्च जाति की हिंदू विधवाओं की प्रथा है। अन्य विधवाएं अलग–अलग रंगों के कपड़े पहनती हैं – कुछ हल्के रंग का प्रयोग करती हैं, हिंदुओं और मुसलमानों, दोनों में ही कुछ समुदायों में विधवाओं के लिए कुछ रंग निर्धारित किये गये हैं, जैसे कि भूरा, काला, बैंगनी आदि। ज्यादातर विधवाएं बहुत कम गहनों का प्रयोग करती हैं, जैसे कि कंगन, बिंदी आदि। ये सारे रीति रिवाज पितृसत्तात्मक समाज की देन हैं जो चाहता है कि विधवा आकर्षक और सुंदर न दिखे–ताकि उसका किसी पुरुष से संबंध न बन सके और परिवार को शर्म का सामना न करना पड़े। लेकिन "सफेद"–सभी विधवा औरतें सफेद नहीं पहनती हैं।

● **"वे कमजोर और दयनीय हैं" –**विधवाएं निश्चित रूप से कमजोर नहीं होती हैं–वे बहुत मजबूत औरतें होती हैं, उन्हें होना पड़ता है। उन्हें कई तरह के रिवाजों और परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है जिससे उनकी आंतरिक शक्ति प्रबल होकर सामने आती है और वे अपनी जिंदगी को अच्छी तरह संभाल पाती हैं। और विधवाएं दया की पात्र नहीं बनना चाहती हैं –"ओह, बेचारी...."। यह प्रवृत्ति उनके कल्याण की भावना जगाती है जबकि उन्हें चाहिए सम्मान के साथ जीने का अधिकार। वे मजबूत औरतें हैं – दक्षता और अच्छी सोच के साथ जो उन्हें उत्तरजीवी बनाते हैं–उन्हें जमीन और संपत्ति का अधिकार चाहिए, सरकारी मान्यता चाहिए, हिंसा से मुक्ति चाहिए–ऐसे व्यक्ति और समुदाय चाहिए जो उन्हें समझ सकें और उनकी भावनात्मक रूप से मदद कर सकें, कानून की समझ और ऐसा तंत्र चाहिए जो उनकी सहायता कर सकें।

● **"ज्यादातर विधवाएं दोबारा शादी करना चाहती हैं" –** सच्चाई ये है कि ज्यादातर विधवाएं दोबारा शादी नहीं करना चाहती हैं, खासकर तब जब उनके बच्चे हों। वे बस सम्मान और शांति के साथ जीना चाहती हैं। समाज ये सोचता है कि विधवाएं पुनर्विवाह करना चाहती हैं, लेकिन कुछ जातियां इसे रिवाजों के नाम पर निषेधित करती हैं, जैसे–ब्राह्मण, राजपूत, जैन। ये सच है कि युवा विधवाओं के लिए, जिनके बच्चे नहीं हैं, पुनर्विवाह करना अच्छा माना जा सकता है–समाज और खुद उक्त विधवा द्वारा भी। लेकिन अन्य मामलों में, विधवाएं सोचती हैं – अगर उनका पति अच्छा रहा हो तब तो एक के सहारे ही पूरी जिंदगी कट जाएगी–लेकिन अगर पति बुरा रहा हो–हिंसक और लापरवाह– तो वे फिर से खतरा मोल नहीं लेना चाहती हैं।

● **''कई विधवाएं डायन होती हैं''** – समाज में कई लोग इस अफवाह पर विश्वास कर लेते हैं कि एक विधवा औरत ''डायन'' होती है। ऐसी अफवाहें ज्यादातर सुदूर ग्रामीण इलाकों से शुरू होती हैं जहां लोग अपने आस–पास हो रही बुरी घटनाओं के लिए 'कारण और प्रभाव' की तलाश करते रहते हैं। लेकिन एक विधवा के 'डायन' होने की अफवाह वही फैलाता है जिसे उक्त विधवा से कुछ चाहिए होता है और वह स्त्री उस व्यक्ति को वह चीज नहीं देने के लिए सक्षम होती है। उदाहरण के लिए, किसी विधवा की जमीन पर उसका पड़ोसी अवैध कब्जा करना चाहता है और वह विधवा उसे ऐसा करने से रो. कने में सक्षम है! तब वह पड़ोसी इस बात की अफवाह फैलाने लगता है कि उक्त विधवा 'डायन' है और उसकी वजह से एक बच्चा बीमार पड़ गया है, या वो मानसून को जल्दी आने से रोक रही है या फिर उसने गाय को दूध देने से रोक दिया है, आदि..., और उस इलाके के सीधे–सादे लोग उस अफवाह पर भरोसा कर लेते हैं। अब पड़ोसी को उम्मीद हो जाती है कि लोग उस विधवा स्त्री से बात नहीं करेंगे, यहां तक कि वो उसकी पिटाई भी कर सकते हैं, और इससे भी अधिक कि वह गांव और अपनी जमीन छोड़कर चली जाए। चरम अवस्था में विधवा स्त्री की हत्या तक कर दी जाती है!
ऐसे ही, एक व्यक्ति ने विधवा के साथ जबरन यौन संबंध बनाने की कोशिश की लेकिन विधवा ने उसका विरोध किया। तब उस व्यक्ति ने उसे 'देख लेने' की धमकी दी। ऐसे मामलों में अक्सर विधवा को 'डायन' करार दिया जाता है।

● **''विधवाएं अशुभ होती हैं''** –कई समुदाय मानते हैं कि विधवाएं अशुभ होती हैं और इसलिए उन्हें विवाह जैसे शुभ अवसरों पर आमंत्रित नहीं किया जाता है। इसके अलावा, समाज में कई लोग सोचते हैं कि अगर सुबह वे काम पर जा रहे हैं और उन्होंने किसी विधवा को देख लिया तो यह अशुभ है और वे दोबारा घर लौट जाते हैं। इस तरह के सामाजिक निषेध विधवाओं पर नियंत्रण रखने के लिए लगाए जाते हैं ताकि वे स्वतंत्र होकर घूम–फिर न सकें। कारण और प्रभावों को जोड़ने में अंधविश्वास फिर से बड़ी भूमिका निभाते हैं। उदाहरण के लिए, कुछ लोग सोचते हैं कि अगर विधवा स्त्री किसी शादी में शामिल होती है तो दूल्हे की असमय मौत हो जाती है। या अगर किसी व्यक्ति के साथ कुछ बुरा होता है और वह कहता है कि उस दिन उसने घर से निकलते समय किसी विधवा को देखा था इसलिए यह बुरी घटना उसके साथ हुई, इसलिए अगर तुमने निकलते समय विधवा को देख लिया तो काम पर मत जाओ! ये ऐसा मिथक है जो किसी विधवा के आत्मसम्मान और गुणवत्ता को नुकसान पहुंचाता है।

समाज को बदलने के लिए विधवाएं क्या कर सकती हैं?

कोई भी विधवा अकेले चीजों को नहीं बदल सकती है–विधवाएं और अन्य अकेली महिलाएं सामूहिक रूप से संगठित और जागरूक हों, तो संभव है।

1999 में राजस्थान में एक राज्यस्तरीय विधवा कन्वेंशन हुआ था। 20 जिलों से 450 विधवाएं एक साथ अपनी समस्याओं को साझा करने और अपने लिए योजनाओं तथा संसाधनों को सुनने तथा जानने के लिए एकजुट हुईं थीं जो उन्हें अच्छी जिंदगी जीने में मदद कर सकता था। उन्होंने कहा कि इन चार दिनों में उनकी समस्याएं नहीं सुलझ सकतीं बल्कि उन्हें एक ऐसे संगठन की जरूरत है जो वे सारे बदलाव ला सके जो उनके दिमाग में है। इसलिए एक 'फॉलो अप कमिटी' बनाई गई जो दो महीने के बाद फिर मिली और जिसने एक सदस्यता आधारित संगठन का गठन किया, एकल नारी शक्ति संगठन (दि एसोसिएशन ऑफ स्ट्रांग वीमेन अलोन)। वे अपने नए संगठन में अलग रहने वाली और तलाकशुदा औरतों के लिए भी जगह चाहती थीं जिनकी समस्याएं विधवाओं के समान ही थीं।

संगठन ने दो स्तरों पर काम करना शुरू किया– (क) प्रखंड स्तर पर विधवाओं और अकेली महिलाओं द्वारा लाई गई समस्याओं को प्रखंडस्तरीय कमिटी के जरिये

कोई भी विधवा चीजों को अकेले नहीं बदल सकती है–विधवाएं और अन्य एकाकी महिलाएं सामूहिक रूप से संगठित और जागरूक हों, तो संभव है। वे मजबूत औरतें हैं – दक्षता और अच्छी सोच के साथ जो उन्हें उत्तरजीवी बनाते हैं–उन्हें जमीन और संपत्ति का अधिकार चाहिए, सरकारी मान्यता चाहिए, हिंसा से मुक्ति चाहिए–ऐसे व्यक्ति और समुदाय चाहिए जो उन्हें समझ सकें और उनकी भावनात्मक रूप से मदद कर सकें, कानून की समझ और ऐसा तंत्र चाहिए जो उनकी सहायता कर सकें।

सुलझाना और, (ख) राज्यस्तरीय कमिटी जिसमें हर संबंधित जिले से तीन विधवाएं सदस्य हों। राज्य कमिटी ने संगठन के लिए नीतियां बनाने का काम किया और उन्हें राजस्थान सरकार के मंत्रियों और अधिकारियों से साझा किया ताकि अकेली महिलाओं का जीवन सुधारने के लिए योजना, कानून और नीतियां बनाई जा सकें।

जल्दी ही, संगठन के सदस्यों की संख्या हजारों तक पहुंच गई, अकेली महिलाओं को जमीन और संपत्ति के अधिकार मिलने लगे, पेंशन पाने के लिए सरकार की मान्यता, बच्चों के लिए योजनाएं, राशन और आवास की सुविधा (इंदिरा आवास योजना) महिलाओं तक पहुंचने लगीं। प्रखंड कमिटी की सदस्यों के ज्ञान और दक्षता को बढ़ाने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए गए ताकि हजारों विधवाओं और अकेली महिलाओं को लाभ पहुंचाया जा सके। दूसरे राज्यों ने संगठन के बारे में सुना और धीरे–धीरे उन राज्यों में भी विधवाओं और अकेली महिलाओं के संगठन अस्तित्व में आने लगे। काम धीरे–धीरे बैक सपोर्ट के साथ शुरू हुआ, और फिर कुछ प्रखंडों और जिलों से होते–होते यह हर राज्य तक पहुंच गया।

2009 में अकेली महिलाओं के लिए एक राष्ट्रीय एकल नारी अधिकार मंच का गठन किया गया। आज दस राज्य और एक केन्द्रशासित प्रदेश इससे जुड़े हैं और विधवा व अलग रह रहीं महिलाएं इसकी सदस्य हैं। राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, तेलंगाना, आंध्र प्रदेश, पांडिचेरी, झारखंड, पश्चिम बंगाल, उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश और पंजाब एक साथ मिलकर काम कर रहे हैं। यह मंच राज्यों की संख्या को बढ़ाने पर काम कर रहा है जिससे अकेली और विधवा औरतें साथ आएं और समस्याओं का साझा हल निकाल सकें। वे केन्द्र सरकार के सामने भी अपने मुद्दों और सुझावों को रख रही हैं ताकि अकेली औरतों की सहायता के लिए ज्यादा सटीक नीतियां और कार्यक्रम बनाए जा सकें। इसकी सदस्य आपस में अपनी सफलताओं, मामलों, राज्यस्तरीय नीतियों, सदस्यों के आंकड़े आदि पर विमर्श करती हैं और हर वर्ष एक राष्ट्रीय स्तर का सिंगल वीमेन कन्वेंशन का आयोजन करती हैं। इस राष्ट्रीय मंच से जुड़ने वाली विधवाओं और अकेली महिलाओं की संख्या 1,20,000 से भी अधिक पहुंच चुकी है।

ज्यादातर काम राज्य और स्थानीय स्तर पर हो रहे हैं। लेकिन यदि केन्द्र स्तर पर ज्यादा काम हो तो इससे केन्द्र सरकार द्वारा अकेली और विधवा महिलाओं के पक्ष में नीतियां तैयार करने में सहायता मिलती है। जैसे कि 2016 में राष्ट्रीय महिला सशक्तीकरण नीति बनी जिसे भारत सरकार के महिला एवं बाल विकास मंत्रालय ने तैयार किया।

चीजें बदल रही हैं –

- विधवाएं रंगीन वस्त्र पहन रही हैं, बिंदी और कंगन का इस्तेमाल कर रही हैं
- सामूहिक रूप से, वे एक–दूसरे की मदद कर रही हैं ताकि जाति और समुदाय के घृणित रिवाजों को बदल सकें
- सामूहिक रूप से, वे अकेली महिलाओं पर होने वाली हिंसा का विरोध करते हुए न्याय तक पहुंच बना पा रही हैं
- संगठन दक्षता प्रशिक्षण कार्यक्रमों के जरिये विधवाओं को जोड़ रहे हैं, वे सरकार के साथ मिलकर पेंशन की राशि बढ़ाने और बच्चों की देखभाल जैसे मुद्दों पर काम कर रह हैं
- कुछ राज्यों में डायन प्रथा के खिलाफ कड़े कानून बनाए गए हैं
- विधवाएं सरकारी योजनाओं तथा अपने अधिकारों तक पहुंच पा रही हैं
- अकेली महिलाओं के संगठन अपनी सदस्यों के लिए 'वैकल्पिक परिवार' का निर्माण कर रहे हैं, ताकि वे अब और 'अकेलापन' नहीं महसूस कर सकें –

उन्होंने दिल को छू लेने वाला नारा दिया है –
" एकल लेकिन अकेली नहीं"

उभरती और बढ़ती हुई श्रवण कुमारियां

आज्ञाकारी पुत्र श्रवण कुमार की कहानी तो बचपन में पढ़ी थी, पर मात–पिता भक्ति के लिए बेटियों का गुणगान करती एक भी कहानी न सुनी, न पढ़ी। जाहिर है कि हमारे पितृसत्तात्मक समाज में हम बेटियों से माँ–बाप को सिर्फ यही उम्मीद रहती है कि हम समय पर, उनकी पसंद की शादी करवा लें, पतिव्रता और सास–ससुर व्रता बने रहें और ससुराल में अपने कारनामों से मायके की बदनामी न होने दें। चूंकि पुरुष प्रधान समाज सिर्फ बेटों से आगे चलते और बढ़ते हैं, बेटियों से नहीं, तो हम बेटियों की शिक्षा और कमाने की क्षमता पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया जाता। पारिवारिक व्यवसाय और संपत्ति सिर्फ बेटों को दी जाती है और वंश का नाम भी सिर्फ बेटों से चलता है। मायके में बेटियों को कहते आये हैं "पराया धन" और ससुराल में, "पराये घर से आयी है'' बेटी न यहाँ की, न वहाँ की। न अपनी पहचान, न नाम, न संपत्ति न धाम। सब दूसरों के आसरे। ये हालात बदले जरूर हैं, पर उतने नहीं जितने बदलने चाहिये थे।

इन पितृसत्तात्मक विचारों और परम्पराओं के बावजूद, और इसके बावजूद कि बेटियों के लिए ऐसे कोई रोल मॉडल या आदर्श नहीं हैं, मैं अनगि. नत बेटियों को जानती हूँ जिन्होंने श्रवण कुमार जैसे ही अपने माँ–बाप की देखरेख और सेवा की है और कर रही हैं। इन में से कुछ शादीशुदा भी हैं। यानि, इन श्रवण कुमारियों के जीवनसाथी भी इस नेक काम में उनका साथ दे रहे हैं (मैं कोशिश करती हूँ "पति" शब्द का प्रयोग न करने की, क्योंकि पति का मतलब होता है स्वामी या मालिक। आजाद भारतवर्ष के संविधान के अनुसार स्त्री–पुरुष बराबर हैं, अब कोई किसी का मालिक नहीं हो सकता। जीवनसाथी हो सकता है और होना चाहिए।)

मेरी जान पहचान वाले परिवारों में ज्यादातर में पिता का देहांत पहले हुआ। बहुत सी माओं को उनकी बेटियों ने संभाला। इन परिवारों में बेटे भी थे मगर विदेश में थे या किसी वजह से वे अपनी माँ को अपने पास नहीं रखना चाहते थे या, माँ उनके पास नहीं रहना चाहती थीं।

इन श्रवण सी बेटियों ने अपने माँ–बाप, या सिर्फ माँ, या सिर्फ पिता की सेवा किसी परंपरा के चलते नहीं की। उनसे तो उम्मीद भी नहीं होती कि वे अपने माँ–बाप को संभालें। ये बेटियाँ माँ–बाप के लिए अपने प्यार और अपनी जिम्मेदारी समझ कर उनकी परवरिश करती हैं। आज इन बेटियों के लिए यह जिम्मेदारी उठा पाना इसलिए संभव हो रहा है क्योंकि वे शिक्षित और नौकरीशुदा हैं और अपने पैरों पर खड़ी हैं। इन में से लगभग सबने अपनी पसंद की शादी की या शादी की ही नहीं। यानि, वे परंपरागत तरीके से नहीं जी रहीं। वे काफी हद तक अपनी स्वतंत्रता बचाए हुए हैं। इन्होंने शादी क्यों नहीं की मैं नहीं कह सकती, मगर एक–दो के सन्दर्भ में ऐसा हो सकता है कि माँ–बाप की जिम्मेदारी उठाने की वजह से शादी नहीं की।

मेरी एक दोस्त है। चालीस बरस की होगी। अच्छी पढ़ी–लिखी और होनहार है। अच्छा कमाने के लायक है। तलाकशुदा है, बच्चे नहीं हैं। उसके माता–पिता उसके साथ एक किराए के मकान में रहते हैं। दोनों सत्तर से अधिक उम्र के हैं, दोनों की सेहत नाजुक है। हफ्ते दो हफ्ते में उन में से किसी न किसी को डाक्टर के पास या किसी टेस्ट के लिए ले जाना पड़ता है। मेरी दोस्त के पास कार है और वह उसे खुद चलाती है।

मैं काफी हैरान और खुश होती हूं जब यह दोस्त बताती है कि वे तीनों सिनेमा या नाटक देखने गए थे, या कोई अच्छा भाषण सुनने जायेंगे। यानि, यहां जिन्दगी जी जा रही है, घसीटी नहीं जा रही। माँ बाप यहां बोझ नहीं हैं, साथी हैं और आनंद का जरिया हैं। माँ–बाप की परवरिश करने की वजह से मेरी यह दोस्त पूर्णकालीन नौकरी नहीं कर पा रही। वह सिर्फ वही काम ले रही है जो वह ज्यादा घर से कर सके ताकि माँ–बाप अकेले न हों। उसे अपने माँ बाप के लिए यह सब करना अच्छा लग रहा है। उसे इस बात का कोई दुःख नहीं है कि वह इतना ज्यादा पढ़ कर पूर्णकालीन काम नहीं कर रही। उसके लिए बूढ़े माँ बाप को संभालना नौकरी करने से कम जरूरी, सृजनात्मक या आनंदमय नहीं है।

कमला भसीन

(जानी–मानी नारीवादी लेखिका, समाज सेविका और कवयित्री। आजीविका और जेंडर के मुद्दे पर 27 साल तक संयुक्त राष्ट्र से जुड़ी रहीं। स्वयंसेवी संगठन 'संगत' की सलाहकार व 'वन बिलियन राइजिंग' की दक्षिण एशिया कोर्डिनेटर)

मेरी इस श्रवण कुमारी की माँ काफी जिद्दी हैं। उनकी किसी से ठीक से नहीं बनती। उनकी उनके जीवनसाथी, बेटी, घर पर काम करने वालों के साथ खटपट चलती रहती है। मेरी दोस्त परेशान जरूर होती है पर उन्हें संभालना नहीं छोड़ती। वह हंस कर कहती है खटपट किस रिश्ते में नहीं होती और वैसे भी माँ–बाप से तलाक नहीं लिया जा सकता।

मेरी इस दोस्त के बड़े भाई हैं। शादीशुदा हैं, दो बच्चे हैं, अच्छा कमाते हैं और उसी शहर में रहते हैं। दो साल से तो अपने माँ–बाप को न कभी मिलने आये, न फोन किया। ऐसा क्यों है कोई ठीक से नहीं बता सकता। साल में एक दो–बार मेरी दोस्त भाई को फोन कर के या एसएमएस करके बता देती है कि माँ–बाप कमजोर होते जा रहे हैं और भाई को मिलना चाहते हैं। भाई कह देते हैं आयेंगे, मगर आते नहीं हैं। खास तौर से माँ को बेटे के आने की उम्मीद हमेशा लगी रहती है। हर त्यौहार से पहले वे कहती हैं कि इस बार वह जरूर आयेगा। त्यौहार आते हैं और चले जाते हैं पर बेटा नहीं आता।

मेरी अपनी भी ऐसी ही कहानी है। हमारे पिता के गुजरने के बाद माँ ने अपने घर में अकेले रहना पसंद किया। तीन–चार साल अकेले रहीं। आस–पड़ोस अच्छा था सो हम निश्चिंत थे। फिर माँ को दिल को दौरा पड़ा। वे बिलकुल ठीक तो हो गयीं पर उसके बाद उनके छेयों बच्चों को लगा उन्हें अब अकेले नहीं रहना चाहिए। हमारे

एक भाई और बहन अपने परिवारों के साथ विदेश में थे, एक भाई फौज में थे और छोटी बहन एक छोटे शहर में रहती थी। मेरे बड़े भाई और मैं दिल्ली में रहते थे, सो उन्हें दिल्ली लाना ही ठीक था। मैं जानती थी कि माँ भाई के परिवार में नहीं रह पाएंगी सो मैंने उन्हें हमारे साथ रहने को कहा। मैं अपने जीवन साथी और दो बच्चों के साथ रहती थी और नौकरी भी करती थी। मेरी माँ यह कह कर मेरे पास नहीं आयीं कि "शादीशुदा बेटी के साथ कैसे रहेंगी, लोग क्या कहेंगे।"

वे मेरे बड़े भाई, भाभी व उनके दो बच्चों के साथ, उनके बड़े से घर में रहने गयीं। चन्द महीनों में ही मेरे भाई और माँ दोनों ने कहा उनका वहां रहना मुश्किल है। खटपट और तकरार बहुत थे। अंत में मेरी माँ मेरे पास आ गयीं और अपनी आखिरी सांस तक हमारे साथ ही रहीं। ऐसा नहीं था कि मेरे साथ उनकी खटपट नहीं होती थी। खटपट तो कहीं भी हो सकती है, मगर हमने हाथ खड़े कर के ये नहीं कहा कि हम इकट्ठे नहीं रहेंगे और उन्हें कहीं और भेजा जाए।

मेरी माँ की अर्थी मेरे घर से उठी। हम भाई–बहनों ने मिलकर उनका अंतिम संस्कार किया। दो–चार लोगों को छोड़ कर और सब ने बेटी विरोधी परम्पराओं को तोड़ने के लिए हमें बधाई दी। लोग क्या कहेंगे वाली बात झूठ साबित हुई। हम अपनी कमजोरियों को छुपाने के लिए लोगों को बीच में ले आते हैं।

आज पढाई–लिखाई के क्षेत्र में बेटियां आगे हैं। वे हर पेशे में पहुंच चुकी हैं। खेलकूद में वे देश और दुनिया में नाम कमा रही हैं। हर सरकार में औरतें हैं, हर आन्दोलन में हैं। बाहर भी काम कर रही हैं, घर भी चला रही हैं, बच्चे भी पाल रही हैं।

आज लाखों औरतें अपने बूते पर, बिना मर्द के, अपने परिवार चला रही हैं, अपने माँ–बाप को संभाल रही हैं, अपने भाइयों को पढ़ा–लिखा कर बड़ा कर रही हैं। अब भी क्यों हमें बेटों की लालसा है? अब क्यों बेटियां बोझ हैं? क्या अब भी हमारे देश में हम बेटियों की भ्रूण में हत्या करते रहेंगे, उन्हें पराया धन कहते रहेंगे, उन्हें बोझ समझते रहेंगे?

बेटियों की कितनी और अग्निपरीक्षायें लेंगे ये पितृसत्तात्मक समाज?

मेरा मानना है कि अब पुरुषसत्ता को खत्म करना जरूरी है और यह मुमकिन भी है। आखिर पुरुषसत्ता हम इंसानों की बनायी ही तो है, और अगर हम चाहें तो उसे खत्म कर सकते हैं। प्रकृति भेद बनाती है, अनेक बनाती है। दुनिया में इतनी अनेकता है कि 700 करोड़ से भी ज्यादा इंसानों में दो इंसान भी एकदम एक जैसे नहीं हैं। प्रकृति अनगिनत तरह के इंसान, पेड़–पौधे, परिंदे, पक्षी, कीड़े–मकोड़े बनाती है, मगर प्रकृति नहीं कहती कि गोरे बेहतर हैं, पुरुष बहतर हैं, ब्राह्मण बेहतर हैं, गुलाब और हाथी बेहतर हैं। सबमें फर्क हैं और सबकी अपनी जगह और अहमियत है।

हमारे समाज में कुछ लोग अपने फायदे के लिए, प्राकृतिक भेदों को भेदभाव में बदल देते हैं, ऊंच–नीच पैदा कर देते हैं। अगर गौर से देखें तो ऊंच–नीच वाले तमाम विचार और ढांचे सिर्फ अन्धविश्वास हैं। इनका कोई प्राकृतिक आधार नहीं है। चाहे पुरुषसत्ता हो, या जातिवाद या नस्लवाद या वर्ग। हमने लगभग हर जगह से राजा महाराजा हटा दिए। उसकी जगह प्रजातंत्र ले आये। दासप्रथा लगभग हर जगह से खत्म हो गयी। ठीक इसी तरह अब पुरुषसत्ता को भी अलविदा कहने का समय आ गया है। हमारे संविधान रचने वालों ने तो 66 साल पहले ही पुरुषसत्ता और जातिवाद को प्रस्थान के लिए हरी झंडी दिखा दी थी। अब हम सबको मिल कर अपने समाज और परिवार से इन संविधान विरोधी गैरबराबरियों और अन्यायों को जड़ से उखाड़ना है। तभी हमारे बेटे और बेटियां फल–फूल सकेंगे, हमारे परिवारों में खुशियाँ होंगी। जहां असमानता और अन्याय है वहां खुशियां भला कैसे रह सकती हैं।

अगर बेटे–बेटी दोनों की सामान परवरिश हो, दोनों को समान सुविधाएं और अवसर दिए जाएं, दोनों को उनकी पसंद और काबिलियत के हिसाब से शिक्षा दी जाए तो दोनों फले फूलेंगे। अगर बेटा माँ–बाप के काम धंधे को नहीं संभालना चाहता तो बेटी संभाल लेगी। अगर बेटा निकम्मा निकल जाता है या उसे कुछ हो जाता है तो बेटी है न बुढ़ापे की लाठी या सहारा बनने को। माँ–बाप और परिवार के विकल्प भी दुगने हो जायेंगे।

मैंने आज तक कोई ऐसे किसान नहीं देखा या देखी जो अपनी आधी जमीन पर पूरा ध्यान दे और आधी पर न दे। तो फिर माँ–बाप ऐसा कैसे कर सकते हैं। यह तो अपने पाँव पर खुद कुल्हाड़ी मारने वाली बात है।

पति की मौत के बाद सामाजिक सुरक्षा

गायत्री शर्मा

(एलएल.बी, एलएल.एम (वारविक) प्रोग्राम डायरेक्टर, वीमेन पावर कनेक्ट)

2011 की जनगणना के मुताबिक, देश में वैधव्य झेल रहे लोग 44 मिलियन से अधिक है। चूंकि पुरुष पत्नी की मौत के बाद दोबारा शादी कर लेते हैं, इसलिए विधवा स्त्रियों की संख्या भारत में अत्यधिक है।

अन्य अकेली महिलाओं की भांति ही विधवाओं को भी सामाजिक बहिष्कार और आर्थिक शोषण सहित कई प्रकार की बाधाओं का सामना करना पड़ता है। विधवाओं पर हिंसा विविध रूपों में विद्यमान है जिनमें पति की मृत्यु के बाद उन्हें ससुराल से बाहर निकाल देना, पति की मौत के लिए जिम्मेदार ठहराना, गुजारे के लिए उन्हें खर्च देने से इंकार करना, उनसे कठोर जीवन जीने की अपेक्षा रखना तथा पुनर्विवाह पर सामाजिक प्रतिबंध लगाना आदि शामिल हैं। झारखंड, छत्तीसगढ़ और बिहार में तो 'डायन' के नाम पर उन पर हिंसा के और भी वीभत्स रूप सामने आते हैं। केन्द्रीय और राज्य, दोनों ही स्तरों पर कई योजनाएं और कानून विधवाओं की बेहतरी के लिए बनाए गए हैं, लेकिन उनका प्रभाव सीमित हैं जिसके पीछे अशिक्षा, जागरूकता की कमी, सामाजिक स्थिति के कारण अधिकारों तक पहुंचने में अक्षम होना और विधवाओं पर हिंसा जैसे कारण हैं।

केन्द्रीय विधान

कुछ मामलों में जिनमें विधवाएं भी शामिल हैं, ज्यादातर महिलाएं बुजुर्ग हैं जो आर्थिक रूप से कमजोर हैं। 'दि मेंटेनेंस एंड वेलफेयर ऑफ पेरेंट्स एंड सीनियर सिटीजन्स एक्ट, 2007' एक ऐसा केन्द्रीय कानून है जो बुजुर्गों को इस बात का अधिकार देता है कि – यदि वे स्वयं अपनी कमाई अथवा संपत्ति से अपना खर्च नहीं उठा सकते हैं – तो अपनी देखरेख के लिए अपनी एक या अधिक वयस्क संतान तथा संतान न होने की स्थिति में अपने निकट संबंधियों से गुजारे की मांग कर सकें। लेकिन दुर्भाग्य से यह कानून देश में कम ही प्रचलित है। माता–पिताओं द्वारा खर्चे की मांग आपराधिक दंड संहिता, 1973 के अनुच्छेद 125 के तहत भी की जा सकती है। हालांकि यह दंड संहिता संतानहीन बुजुर्गों की देखभाल के लिए रिश्तेदारों को बाध्य नहीं करती है। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 हिंदू (तथा बौद्ध, सिख व जैन) विधवाओं को प्रथम श्रेणी की उत्तराधिकारी घोषित करता है। यद्यपि कि उत्तराधिकार के कानून विधवाओं को सशक्त बना सकते हैं, फिर भी किसी पुरुष संबंधी के खिलाफ महिलाएं शायद ही दावा कर पाती हैं और सब कुछ कागज तक ही सिमट कर रह जाता है। जमीन और संपत्ति के विवाद का अंत अक्सर विधवाओं पर अत्यधिक हिंसा के साथ होता है।[1]

विधवाओं को प्रायः अपनी ससुराल में घरेलू हिंसा का शिकार बनना पड़ता है। उन्हें अपने पति की मौत का जिम्मेदार ठहराया जाता है और कई मामलों में परिवार पर बोझ मानकर पति के घर से बाहर निकाल दिया जाता है। दुख इस बात का है कि उनका स्वागत उनके पिता के घर में भी नहीं होता।

'घरेलू हिंसा से महिलाओं की सुरक्षा अधिनियम, 2005' एक निरपेक्ष कानून है जो उन सभी घरेलू महिलाओं पर लागू होता है जो घरेलू हिंसा की शिकार होती हैं। यह अधिनियम घरेलू हिंसा की शिकार महिलाओं के हित में उनकी सुरक्षा का आदेश, आवास का आदेश, देखरेख, अस्थायी हिरासत और क्षतिपूर्ति का आदेश देता है। दुर्भाग्यवश, अदालतों के आदेशों की एक व्याख्या बताती है कि घरेलू हिंसा अधिनियम के तहत ''यदि विधवा अपने पिता के घर हो तो उसे सुरक्षा का आदेश नहीं मिल पाता है, क्योंकि वहां उस पर हिंसा का कोई आसन्न खतरा नहीं होता है। इसके अतिरिक्त, अदालत सुरक्षा का आदेश देने से इंकार कर सकती है, यदि वह विवाद को संपत्ति का विवाद मानती है। ऐसे बहुतायत मामलों की सुनवाई से इंकार करने की न्यायपालिका की प्रवृत्ति संपत्ति और हिंसा के बीच के संबंधों की उपेक्षा करती है। आम तौर पर भारत में यह देखा गया है कि पति या पत्नी में से किसी की मौत के बाद, खासकर पति की मौत के बाद, विधवाओं के साथ हिंसा और शोषण किया जाता है, और वे संपत्ति अथवा संसाधनों के बंटवारे के लिए होने वाले विवाद के केन्द्र में होती

हैं। अपनी कमजोर स्थिति के कारण विधवाएं प्रायः अपने अधिकारों के लिए संघर्ष नहीं कर पाती हैं जो आगे चलकर उन पर हिंसा के रूप में सामने आता है और उन्हें राहत देने में न्यायपालिका की विफलता के रूप में।''[2]

आगे,

'' आदेशों की व्याख्या बताती है कि विधवाओं को अधिनियम के तहत प्राप्त आवास और राहत का आदेश भी बहुधा नहीं मिल पाता है। ये जानते हुए भी कि पति की मौत के बाद वे कमजोर स्थिति में हैं और हिंसा तथा शोषण का शिकार हो सकती हैं, उन्हें ज्यादा हानिकर हालात की ओर धकेल दिया जाता है, जब अदालतें ससुराल वालों पर किसी प्रकार की जिम्मेदारी डालने के प्रति अनिच्छा जताती हैं। बत्रा मामले[3] में फैसले के आधार पर, अगर संपत्ति ससुराल से संबंधित हो तो विधवा को अक्सर राहत नहीं मिल पाती है और अदालत उन्हें एक ही घर में साझे में रहने का अधिकार नहीं दे पाती है। इसके अलावे, चूंकि वैकल्पिक आवास का दावा केवल पति के सामने किया जा सकता है, ससुराल वालों या अन्य रिश्तेदारों के सामने नहीं, तो इससे विधवाओं को बड़ा नुकसान होता है। न्यायपालिका द्वारा विधवाओं को राहत न दे पाने का बड़ा दुष्प्रभाव समाज द्वारा उनके बहिष्कार और परित्याग के रूप में प्रतिबिंबित होता है।''[4]

विधवाओं के लिए ससुराल की संपत्ति में हिस्सा मांगने और साथ रहने का दावा उस समय कठिन हो जाता है जब संपत्ति उसके पति के नाम नहीं बल्कि ससुराल में किसी और के नाम होती है।

केन्द्रीय और राज्य स्तर की योजनाएं

विधवाओं के लिए बनीं ज्यादातर योजनाएं उन्हें आर्थिक सहायता प्रदान करती हैं। राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम (एनएसएपी, 1995) एक केन्द्र प्रायोजित योजना है जो सामाजिक पेंशन के रूप में बुजुर्गों, विधवाओं और दिव्यांगों को आर्थिक सहायता प्रदान करती है।

2009 में, एनएसएपी के अंतर्गत, 40 से लेकर 64 वर्ष तक की विधवाओं के लिए इंदिरा गांधी राष्ट्रीय विधवा पेंशन योजना (आईजीएनडब्ल्यूपीएस) शुरू की गई। इसके तहत 40 से 59 वर्ष तक की उन विधवाओं को सहायता दी जाती है जो गरीबी रेखा के नीचे हैं। योजना 79 साल तक के लिए 300 रुपये प्रतिमाह की सहायता देती है।[5]

कुछ राज्य सरकारों ने अपने यहां विधवा पेंशन योजना चलाई है। छत्तीसगढ़ में 18 से 50 वर्ष तक की विधवा औरतों के मासिक पेंशन के लिए सुखद सहारा योजना लागू है। बिहार में 18 वर्ष से अधिक की उन सभी विधवाओं के लिए लक्ष्मीबाई पेंशन योजना लागू है जिनके परिवार की सालाना आय 60,000 रुपये से कम है। हाल ही में दिल्ली सरकार ने बुजुर्गों, विधवाओं तथा दिव्यांगों के लिए मासिक पेंशन को बढ़ाकर 1 हजार रुपये कर दिया है। इसके साथ ही वृद्धावस्था पेंशन योजना के लिए पारिवारिक आय की सीमा 60 हजार वार्षिक से बढ़ाकर 1 लाख रुपये तक कर दी गई हैं।[6]

निराश्रित विधवा, जिनके पास आय का कोई साधन नहीं है, की आर्थिक सहायता के लिए तमिलनाडु सरकार ने निराश्रित विधवा पेंशन योजना लागू की है। यह योजना सभी उम्र की विधवा स्त्रियों, जिनके पास आय का कोई साधन नहीं हो, जो पेशे से भिक्षुक नहीं हों और जिनके पास कुल संपत्ति 5 हजार रुपये से अधिक की नहीं हों, इस योजना के तहत लाभ पाने की हकदार हैं। यदि विधवाओं के उत्तराधिकारी 18 वर्ष से अधिक के भी हों, तो भी उन्हें इस योजना का लाभ मिलता है, लेकिन दोबारा विवाह कर लेने वाली विधवाएं इसके लाभ से वंचित हो जाती हैं। योजना के तहत विधवाओं को 400 रुपये प्रतिमाह की सहायता राशि मिलती है।

सामाजिक सुरक्षा तक विधवाओं के पहुंच पाने में आने वाली समस्याएं

2011 में नेशनल फोरम फॉर सिंगल वीमेन्स राइट्स द्वारा निम्न आय वाली अकेली महिलाओं पर एक सर्वे रिपोर्ट जारी की गई।[7] ये सर्वे छह राज्यों–बिहार, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, झारखंड, महाराष्ट्र और राजस्थान में किये गये थे जिनमें 386 उत्तरदाताओं से जानकारियां जुटाई गईं थीं, जिनमें विधवा, परित्यक्ता, तलाकशुदा और अविवाहित महिलाएं शामिल थीं।

सरकारी योजनाओं तक अकेली महिलाओं की पहुंच को लेकर सर्वे में प्राप्त नतीजे इस प्रकार थे :

- कई अकेली महिलाएं उसी मकान में अतिरिक्त सदस्य के रूप में रहती हैं, वे अपनी और अपने बच्चों की जिम्मेदारियां खुद उठाती हैं।
- अकेली महिलाएं अपने घर की मुखिया होती हैं लेकिन उन्हें सरकार द्वारा मान्यता नहीं मिल पाती है। राशन कार्डों में केवल 40 प्रतिशत उत्तरदाता अकेली महिलाओं को 'घर की मुखिया' के तौर पर चिह्नित किया गया था।
- यद्यपि कि सभी उत्तरदाता गरीबी में जी रही थीं, फिर भी केवल 21 प्रतिशत ही सरकार से 'बीपीएल' का दर्जा पाने में सफल हो सकी थीं।
- उत्तरदाताओं के आवास और आश्रय की जरूरत ठीक प्रकार से पूरी नहीं हो पा रही थी। ज्यादातर उत्तरदाता महिलाएं एक या दो कमरे के कच्चे मकान में रह रही थीं और उनके पास बिजली, पानी तथा शौचालय जैसी मूलभूत सुविधाएं भी नहीं थीं। जहां 60 प्रतिशत विधवाएं अपनी शादी के दिनों में बनाए अपने मकान पर दोबारा नियंत्रण कर पाने में सफल रहती हैं तो वहीं अलग रह रहीं और तलाकशुदा महिलाएं शादी टूट जाने के बाद मकान पर नियंत्रण खो देती हैं।
- उत्तरदाताओं में से केवल 12.7 प्रतिशत को इंदिरा आवास योजना और अन्य सरकारी योजनाओं का लाभ मिल पाता है, जिनमें से ज्यादातर विधवाएं हैं। शहरी क्षेत्रों में अकेली महिलाओं के आश्रय के लिए कोई योजना अथवा प्रावधान नहीं है।
- सामाजिक सुरक्षा पेंशन का लाभ केवल एक चौथाई उत्तरदाताओं को ही मिल पाया था। मौजूदा पेंशन योजना अलग हो चुकीं, तलाकशुदा, अविवाहित अथवा 40 वर्ष से कम उम्र की विधवाओं की सामाजिक सुरक्षा की जरूरतों को पूरा नहीं करती है। इसे केवल बीपीएल परिवारों को लक्ष्य करके बनाया गया है जिसके कारण बड़ी संख्या में गरीब परिवार इसके लाभ से वंचित रह जाते हैं। सामाजिक

सुरक्षा पेंशन योजना की योग्यता की शर्तें ऐसी हैं कि इससे कई जरूरतमंद अकेली महिलाएं वंचित रह जाती हैं। इसके अलावे सरकार ने उन औरतों के लिए कोई प्रावधान नहीं किये हैं जो एक से अधिक पीड़ाओं से ग्रस्त हैं, उदाहरण के लिए उम्रदराज दिव्यांग अविवाहित महिलाएं। योजना के अनुपालन का तरीका, आवेदन और पेंशन के भुगतान की प्रक्रिया लंबी और जटिल है। यह ग्रामीण गरीबों की पहुंच से बाहर है। प्रक्रिया की निगरानी की व्यवस्था न होने और जटिलता के कारण भ्रष्टाचार की पूरी गुंजाइश होती है और भ्रष्ट अधिकारियों द्वारा गरीब महिलाओं से घूस लेने अथवा दलालों द्वारा उन्हें धोखा देने की आशंका प्रबल हो जाती है।

इसके अतिरिक्त, यह रिपोर्ट दर्शाती है कि अकेली महिलाओं की राजनीति में भागीदारी भी बेहद कम है। अविवाहित उत्तरदाताओं में से केवल 13.1 प्रतिशत को किसी प्रकार की पेंशन मिल पाती है जबकि 14.8 प्रतिशत को ही आवास में सहायता मिलती है।

निष्कर्ष

विधवाओं के अधिकार और राहत के लिए बने केन्द्रीय स्तर के कानूनों का पर्याप्त परिणाम नहीं मिल पाता है जिसके पीछे न्यायिक हस्तक्षेप, कानूनों के प्रति जागरूकता का अभाव और अपने अधिकारों की बात करने वाली विधवाओं के साथ हिंसा जैसे कारण हो सकते हैं।

विधवाओं के लिए किये जाने वाले सामाजिक सुरक्षा के उपाय पेंशन की मामूली राशि और वित्तीय सहायता के रूप में उन्हें केवल प्राथमिक सहायता ही दे पाते हैं। जहां इन योजनाओं से मिलने वाली राहत को कम करने की कोशिश नहीं होनी चाहिए वहीं विधवाओं (तथा सभी अकेली महिलाओं के लिए) के लिए ज्यादा बड़े सुरक्षा जाल का निर्माण किया जाना चाहिए। इसमें न केवल राशि के रूप में बल्कि सुरक्षा के अन्य उपायों, जैसे–महिलाओं को घर के मुखिया के तौर पर मान्यता देना, योजनाओं तक पहुंचने के लिए ज्यादा आसान प्रक्रिया को अपनाना, आश्रय और कामकाजी महिलाओं के लिए हॉस्टल जैसी सुविधाएं बढ़ाना और उन तक पहुंच को आसान बनाना, आदि– को भी अपनाना चाहिए। भारत में अकेली महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए सबसे पहला कदम इस बात को मानकर उठाया जा सकता है कि महिलाएं भी घर को स्वयं चला सकती हैं, वे घर की मुखिया हो सकती हैं, जमीन और संपत्ति का प्रबंधन और वसीयत कर सकती हैं और अकेली व स्वतंत्र जिंदगी जी सकती हैं। निर्णय लेने में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ाना होगा ताकि परिवर्तनशील लैंगिक समीकरणों पर राज्यों द्वारा किये गये उपायों के प्रभाव को सुनिश्चित किया जा सके।

1. पी. आदिनारायण रेड्डी '' भारत में विधवाओं की समस्याएं'' (2004)
2. लॉयर्स कलेक्टिव, छठी निगरानी एवं मूल्यांकन रिपोर्ट (2013)
3. 2007 (3) SCC 169, के बत्रा एंड बत्रा मामले में, इस सवाल पर कि क्या विधवा को उस मकान में रहने का अधिकार है जो उसकी सास के नाम पर है, और जहां वह शादी के बाद अपने पति के साथ रह रही थी। यद्यपि कि घरेलू हिंसा अधिनियम में इस बात को स्पष्ट किया गया है कि महिला को साझे में रहने का अधिकार है, चाहे उसका मकान में कोई अधिकार हो या न हो। उस मामले में कोर्ट ने कहा कि चूंकि संपत्ति पति के नाम नहीं बल्कि सास के नाम है, इसलिए पीड़िता को उस मकान में रहने का अधिकार नहीं है।
4. लॉयर्स कलेक्टिव, छठी निगरानी एवं मूल्यांकन रिपोर्ट (2013)
5.''गाइडलाइन्स ऑन दि वेरीयस स्कीम्स ऑफ एनएसएपी'' http://nsap.nic.in/Guidelines/wps.pdf
6. ''पेंशन हाइक्ड फॉर विडोज, सीनियर सिटीजन्स'' टाइम्स ऑफ इंडिया (जनवरी 7, 2017)
7 नेशनल फोरम फॉर सिंगल वीमेन्स राइट्स ''आर वी फॉरगॉटेन वीमेन?'' (2011)

भारत में विधवाओं की दशा को नजदीक से देखने वाले पत्रकार मार्क मैग्नियर ने लॉस एंजिल्स टाइम्स में लिखा था '' ललिता गोस्वामी शादी के कुछ साल बाद ही विधवा हो गई थीं। उनके पति बहुत ज्यादा शराब पीते थे और उसके बाद ललिता को पीटा करते थे। शराब की लत ने ही उनकी जान ले ली थी। फिर भी ललिता कहती हैं कि वो जिंदगी विधवा की जिंदगी से बेहतर थी। पति के जाने के बाद अपने तीन बच्चों के साथ वे अकेली रह गई। पति के भाई ने ललिता और उनके बच्चों को घर से बाहर निकाल दिया और वे कोलकाता में अपने पिता के घर आ गईं। ललिता के भाई ने भी उन्हें बोझ की तरह ही देखा और पड़ोसी उसे ताने मारने लगे। घर में शांति बनी रहे इसके लिए मां ने ललिता और उनके दो छोटे बच्चों को वृंदावन में भेज दिया। (मार्क मैग्नियर, लॉस एंजिल्स टाइम्स, 16 अक्टूबर, 2012)

रायटर ने वृंदावन में एक 75 वर्षीय विधवा का साक्षात्कार लिया था। उन्होंने बताया कि उनकी शादी 5 वर्ष की उम्र में हो गई थी लेकिन शादी के महज तीन दिन के बाद उनके पति की मृत्यु हो गई थी। तब से लेकर आज तक वे विधवा का जीवन जी रही थीं। उनके पिता ने 12 वर्ष तक की उम्र तक उनकी देखभाल की लेकिन उसके बाद उनके भाइयों और चाचा ने मिलकर उन्हें घर से बाहर निकाल दिया। वर्ष 2000 के शुरुआती दिनों में वे भजन गाकर एक दिन में 10 पैसे कमा पाती थीं और साथ में कभी–कभी उन्हें एक मुट्ठी चावल भी मिल जाया करती थी।

(http://factsanddetails.com/india/People_and_Life/sub7_3d/)

'चाचीमाय'

यह कहानी नहीं, हमारे समाज का आइना है। हमारे समाज में बुजुर्गों की क्या स्थिति है, इससे हम सब वाकिफ हैं। बुढ़ापा एक अभिशाप है और खासकर विधवाओं के लिये तो असाध्य रोग। लोक लज्जा से लोग वृद्धा आश्रम में तो डालने से थोड़ा हिचकिचाते, लेकिन घर में जिस स्थिति में रहती हैं वह बहुत ही दयनीय है। चाचीमाय प्रतीक हैं उन सारी विधवा माँओं की जिन्होंने अपने पूरे जीवन की आहुति देकर अपने परिवार की सेवा की, लेकिन बदले मे मिला क्या? तिरस्कार और प्रताड़ना! दो जून की रोटी भी ठीक से नसीब नहीं हो पाती थी। 6 बेटों और 3 बेटियों की माँ होने पर भी हर पल मौत की या यों कहें मोक्ष की राह देखती। नर्क से भी बदतर जिंदगी से गुजरना पड़ा था चाचीमाय को।

आनंद माधव

(प्रधान सलाहकार, जेंडर रिसोर्स सेंटर। 2016 में वर्ल्ड सीएसआर कांग्रेस द्वारा चुने गए "100 सबसे प्रभावशाली सीएसआर नेतृत्व (वैश्विक सूची)" में शामिल। सोशल मार्केटिंग के विशेषज्ञ तथा मीडिया एवं संचार क्षेत्र के महारथी हैं।)

चाचीमाय आज चल बसीं। अजीब सा सुकून था उनके चेहरे पर। लग रहा था बहुत दिनों बाद सुख की नींद आई है उन्हें। उनके बच्चे 6 बेटा और 3 बेटियां, दर्जनों पोता–पोती, नाती–नातिन दहाड़ें मार रो रहे थे। "माय गे अब हम केना रहबैय गे?" पास–पड़ोस की भी आँखें नम थीं।

चाचीमाय समूचे घर का काम खत्म कर, सबको खिला–पिला कर देर शाम रोज खाना खा पाती थीं। अक्सर आँगन में खाते–खाते थकावट से उनकी आँखें लग जाती थी और कुत्ता थाली में मुँह लगा देता था। बड़ा सा आँगन, भरा–पूरा परिवार, दमा से ग्रसित पति की सेवा करते–करते देर होना तो स्वाभाविक था। कभी–कभार ही उन्हें आस–पड़ोस के लोगों से बातें करते हुये देखा गया। समय ही कहाँ था उनके पास।

पति अब नहीं रहे, वह भी अब सेवा के लायक नहीं रह गई थीं। हालांकि कई बच्चे उनके नौकरी कर रहे थे और अपनी दुनिया बसा चुके थे। लेकिन कोई बेटा साथ रखना नहीं चाहता था, बेटी की बात तो छोड़ ही दीजिये। मां बोझ जो बन गई थी। लोक–लिहाज के डर से तीसरा बेटा उन्हें अपने साथ रखने लगा। रखने क्या लगा, बस ढो रहा था। बहू बहुत ही कर्कश थी। यों कह लीजिये बहू साक्षात पूतना थी। गालियाँ अनंत देती, अपने भाग्य को कोसती कहाँ से हमारे पल्ले पड़ी है, मरती भी नहीं बुढ़िया, सबको मार कर मरेगी। कभी–कभी तो इतने झटके से किसी काम के लिये खींचती कि बुढ़िया गिर जाती और फिर पूतना घसीटती उसे किनारे करने के लिये। दिन भर का बचा–खुचा खाना अलमुनियम की थाली में लाकर सामने पटक देती। खाते समय आँख के कोने से पानी टपकने लगता था। बेटा निरीह हो माँ को देखता लेकिन कुछ कर नहीं पाता। हाँ, बहू जब स्कूल जाती तो चुपके से कुछ खिला देता या पूछ लेता। बगल के पड़ोसी को नहीं देखा जाता था यह सब और अक्सर उनकी सेवा करते, लेकिन बदले में बहू की गालियाँ खाते– बड़ा मोह जगा है तो खुद क्यों नही रख लेते, सब दिखावा है। एक बार नहलाते समय पूतना ने इतनी जोर से धक्का दिया कि गिर पड़ी बेचारी और फिर कभी न उठ सकीं। पता नहीं किस जन्म का, किस करम का भोग था।

आज मैं उनकी मृत्यु पर खुश था और ईश्वर से प्रार्थना कर रहा था कि अब किसी जन्म में उन्हें चाचीमाय नहीं बनाना।

कानून की नजर में विधवाएं

समाज ने भले ही विधवाओं को हेय दृष्टि से देखा हो, पर संविधान और कानून ने सभी नागरिकों को एक नजरिये से देखा और सम्मान दिया है। पति की मौत के बाद स्त्रियों को होने वाली आर्थिक –सामाजिक क्षति को समझते हुए कानून ने उनके लिए समाज और संपत्ति में अधिकारों को सुनिश्चित किया। हालांकि देश में एक समान नागरिक संहिता नहीं होने के कारण हिंदू, मुसलमान और ईसाईयों के कानून अलग–अलग हैं।

हिंदू विधवाओं को संपत्ति का अधिकार

हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 कहता है कि पति की मौत के बाद संपत्ति का बंटवारा प्रथम श्रेणी के उत्तराधिकारियों में होगा। नियम 1 में कहा गया है कि यदि पति ने पहले से कोई वसीयत तैयार नहीं की है तो उसकी संपत्ति उसकी विधवा को, और एक से अधिक पत्नियों के होने की स्थिति में सभी विधवाओं को मिलाकर संपत्ति का एक हिस्सा दिया जाएगा। उदाहरण के लिए, अगर पति बिना वसीयत किये हुए मर जाता है और उसकी दो पत्नियां और एक बेटा है, तो यहां प्रथम श्रेणी के उत्तराधिकारी को संपत्ति का बराबर भाग प्राप्त होगा चाहे इसके लिए अन्य को बेदखल क्यों न करना पड़े। इस मामले में सेक्शन 10 के नियम एक के मुताबिक, दोनों विधवाओं को एक मिलाकर संपत्ति का एक हिस्सा दिया जाएगा जबकि दूसरा हिस्सा उसके बेटे को प्राप्त होगा। दूसरी ओर, अगर पति बिना वसीयत किये हुए गुजर जाता है और उसकी दो बीवियां हैं लेकिन कोई बेटा नहीं है, तो दोनों बीवियों को संपत्ति में से बराबर–बराबर हिस्सा दिया जाएगा। यहां प्रथम श्रेणी का कोई दूसरा उत्तराधिकारी नहीं है।

पुनर्विवाह के बाद भी पूर्व पति की संपत्ति पर विधवा का अधिकार है

2008 में, उच्चतम न्यायालय ने अपने एक फैसले में कहा कि यदि कोई विधवा दोबारा शादी कर लेती है तो भी उसे अपने पूर्व पति की संपत्ति को रखने का पूर्ण अधिकार है क्योंकि वह उस संपत्ति की 'परम अधिकारिणी' है। ऐसा हिंदू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम, 1856 के प्रावधानों पर हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के प्रभावों के कारण संभव है। उच्चतम न्यायालय इस मामले में हिंदू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम, 1856 के प्रावधानों से सहमत नहीं है जो कहता है कि विधवा का उसके पति की संपत्ति –चाहे उसे वो उत्तराधिकार में मिली हो अथवा देखरेख के लिए – में अधिकार उसके दोबारा विवाह कर लेने से समाप्त हो जाता है। न्यायालय हिंदू विवाह अधिनियम के हवाले से कहता है कि चूंकि अधिनियम विधवा को पति की संपत्ति की परम अधिकारिणी मानता है तो इस आधार पर उसके दोबारा विवाह कर लेने से उसका अधिकार समाप्त नहीं हो सकता है। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के लागू हो जाने के बाद तो उसे कदापि वंचित नहीं किया जा सकता चाहे स्त्री की वैवाहिक स्थिति में कोई भी परिवर्तन आ जाए।

उच्चतम न्यायालय ने अपने फैसले में कहा कि हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम से शास्त्रिक हिंदू कानून में आमूलचूल परिवर्तन हुआ है और इसने हिंदू विधवाओं को उत्तराधिकार और वसीयत में पुरुषों के बराबर ला खड़ा किया है। न्यायालय ने हिंदू विवाह अधिनियम के सेक्शन 4 को किसी भी हिंदू कानून से अधिक प्रभाव वाला बताया है।

मुस्लिम स्त्रियों को संपत्ति का अधिकार

मुसलमानों में मुख्य रूप से दो कानून प्रचलित हैं–हनाफी या सुन्नी और शिया कानून। भारत में सुन्नियों की संख्या शियाओं से अधिक है। सुन्नी अथवा हनाफी स्कूल केवल उन रिश्तेदारों को उत्तराधिकारी मानता है जो किसी पुरुष के जरिये मृत व्यक्ति से संबंधित हैं। जैसे कि बेटे की बेटी, बेटे का बेटा या पिता की मां आदि। इसके विपरीत शिया स्कूल में ऐसा भेदभाव नहीं होता और उनमें यदि मृत व्यक्ति का कोई रिश्तेदार किसी स्त्री के जरिये भी संबंधित है तो वह संपत्ति का उत्तराधिकारी हो सकता है। मुसलमानों में संपत्ति में औरतों को दिये जाने वाले अधिकारों को इस प्रकार जान सकते हैं :

- संपत्ति में मर्दों को औरतों से दोगुना हिस्सा मिलता है
- एक मुसलमान अपनी कुल संपत्ति का एक–तिहाई से अधिक हिस्सा वसीयत में नहीं दे सकता। हालांकि यदि किसी औरत का कोई सगा रिश्तेदार नहीं है और केवल उसका पति ही एकमात्र उत्तराधिकारी है तो वह महिला अपने पति के पक्ष में दो–तिहाई हिस्सा दान कर सकती है।
- यदि मृत व्यक्ति के सभी उत्तराधिकारी उसके एक समान निकट संबंधी हों तो सभी को संपत्ति का बराबर–बराबर हिस्सा प्राप्त होगा। सबसे नजदीकी व्यक्ति को अधिक हिस्सा दिया जा सकता है।
- औरत को बेटी, विधवा, दादी, मां और बेटे की बेटी के तौर पर संपत्ति में हिस्सा मिल सकता है।
- यदि किसी विधवा स्त्री के बच्चे हैं तो उसे अपने मृत पति की संपत्ति का आठवां हिस्सा मिलेगा। यदि विधवा के कोई बच्चे नहीं हैं तो उसे संपत्ति का एक–चौथाई भाग प्राप्त होगा।
- बहन को अपने भाई की तुलना में आधा ही हिस्सा प्राप्त होगा। यानी जितना बेटे को मिलेगा, बेटी को उसका आधा मिलेगा। अगर कोई भाई नहीं है, तो बेटी को संपत्ति का आधा हिस्सा मिलेगा।
- मृत व्यक्ति की दादी या नानी को केवल तभी जायदाद में हिस्सा मिलेगा जब वे विधवा हों।

अंतरराष्ट्रीय कानून

मानवाधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र के घोषणापत्र के अनुच्छेद 2 में कहा गया है ''प्रत्येक व्यक्ति इस घोषणापत्र में बताए गए सभी अधिकारों एवं स्वतंत्रताओं को पाने का हकदार है, इस बात में बिना भेद किये कि वह किस जाति, रंग, लिंग, भाषा, धर्म, राजनीति, विचार, राष्ट्रीयता अथवा सामाजिक परिवेश का है।'' इसमें जो अधिकार बताए गए हैं, उनमें निम्न शामिल हैं :

- **कानून के समक्ष समानता का अधिकार और सुरक्षा में समानता का अधिकार**
- **विवाह संबंधों में समानता का अधिकार**
- **संपत्ति पाने का अधिकार**
- **सम्मान के साथ रहने और जीवन शैली अपनाने का अधिकार**

इन अधिकारों की व्याख्या कन्वेंशन ऑन दि एलिमिनेशन ऑफ ऑल फॉर्म्स ऑफ डिस्क्रिमिनेशन अगेंस्ट वीमेन (CEDAW 1967) में भी की गई है। CEDAW के अनुच्छेद 1 में कहा गया है कि ''.....लिंग के आधार पर किया गया कोई भी भेदभाव, बहिष्कार अथवा प्रतिबंध, जिसका उद्देश्य महिला की मान्यता, सम्मान अथवा सुख को समाप्त करना हो, चाहे वह किसी भी वैवाहिक अवस्था में हो, उसके राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक या कोई अन्य क्षेत्र के मानवाधिकार और मौलिक अधिकारों में स्त्री और पुरुष का भेद नहीं किया जा सकता।''

वैश्विक स्तर पर महिलाओं के अधिकारों को इंटरनेशनल कोवेनेंट ऑन सिविल एंड पॉलिटिकल राइट्स (ICCPR) तथा इंटरनेशनल कोवेनेंट ऑन इकोनोमिक, सोशल एंड कल्चरल राइट्स (ICESCR) में भी सुरक्षित किया गया है।

इस बात के प्रत्यक्ष उदाहरण और प्रमाण हैं कि जिन देशों में उपरोक्त अंतरराष्ट्रीय सुरक्षात्मक कानून लागू भी हैं और जहां किसी प्रकार का विवाद अथवा युद्ध की स्थिति नहीं है, वहां भी एक इंसान के तौर पर विधवाओं के अधिकारों का खूब हनन हुआ है। इनके सम्मान और अधिकारों को परंपरागत, सांस्कृतिक और धार्मिक रीतियों के नाम पर छीना गया है, उन्हें जमीन और संपत्ति के अधिकारों से वंचित किया गया है, मृत पति के शोक में पूरा जीवन लाचारी और निराशा में बिताने के लिए मजबूर किया गया है तो कहीं उन्हें जबर्दस्ती किसी के साथ शारीरिक संबंध बनाने या विवाह करने के लिए विवश किया गया है।

अपने आलेख ''ट्रांजिशनल पर्सपेक्टिव्स इन वीमेन्स राइट्स'' में पेनेलोप एंड्रयूज ने लिखा है, ''महिलाओं के अधिकारों के मामले में लगभग हर बार संस्कृति और परंपरा का प्रश्न हावी हो जाता है। संस्कृति के संरक्षण की बात भी हमेशा पुरुष राजनीतिज्ञ करते हैं क्योंकि वे नहीं चाहते कि महिलाओ की स्थिति में बदलाव हो, जबकि वे इस बात को बिल्कुल ही नजरअंदाज कर देते हैं कि संस्कृति स्थिर नहीं बल्कि गतिशील होती है।''

भारत में एकाकी औरतें

वर्तमान स्थिति व भविष्य की रूपरेखा

प्रो. विभूति पटेल

(पीएचडी अर्थशास्त्र, अर्थशास्त्र विभाग प्रमुख, एसएनडीटी वीमेंस यूनिवर्सिटी, मुंबई तथा डायरेक्टर, सेंटर फॉर स्टडी ऑफ सोशल एक्सक्लूजन एंड इनक्लूजन पॉलिसी)

महिला आंदोलनों और महिलाओं के मुद्दों पर शोध ने अकेली महिलाओं की सामाजिक सुरक्षा तथा संरक्षण के विषय को सार्वजनिक स्तर पर चर्चा के लिए मंच प्रदान कर दिया है। इन औरतों में अविवाहित, विधवा, तलाकशुदा और परित्यक्ता सभी तरह की अकेली महिलाएं शामिल हैं। समय के साथ इन महिलाओं की विशेष जरूरतों को भी मान्यता मिलने लगी है। जेंडर अर्थशास्त्रियों ने अकेली महिलाओं एवं उनके आश्रितों के लिए कल्याणकारी योजनाओं, आर्थिक कार्यक्रमों और सामाजिक सुरक्षा सेवाओं को लागू करने की अनुशंसा की है।

भारत के शांतिपूर्ण इलाकों में हर 10 में से 1 परिवार का नेतृत्व तलाकशुदा अथवा परित्यक्त महिलाएं करती हैं जबकि युद्धरत क्षेत्रों में 30 फीसद से अधिक परिवारों का संचालन किसी अकेली महिला द्वारा किया जाता है जो न केवल बच्चों के पालन–पोषण और शिक्षा का उत्तरदायित्व संभालती है बल्कि बुजुर्गों (चाहे वो माता–पिता हों या सास–ससुर) की देखभाल, परिवार की सुरक्षा और आर्थिक उपादान भी तलाशती है। संयुक्त राष्ट्र के मुताबिक, पूरी दुनिया में करीब एक–तिहाई परिवारों का नेतृत्व महिलाएं करती हैं। अफ्रीका और लैटिन अमेरिका में तो करीब 45 फीसद परिवार ऐसे हैं जिनका संचालन महिलाएं करती हैं और वे अपने परिवार में कमाने वाली अकेली सदस्य हैं। हालांकि महिलाओं द्वारा चलाए जाने वाले परिवार पुरुषों के नेतृत्व वाले परिवारों की तुलना में गरीब होते हैं। इतना ही नहीं गरीब समूहों में महिलाओं द्वारा संचालित परिवार सबसे निम्न श्रेणी में आते हैं।

परिवार में पुरुष सदस्य की अनुपस्थिति में अकेली महिलाओं को जीविका के साधन तलाशने के लिए कई समझौते करने पड़ते हैं। कुछ मामलों में तो, जहां पुरुष लम्बे समय के लिए प्रवास पर चले जाते हैं, महिलाओं की जिंदगी नरक बना दी जाती है। एक ओर तो समुदाय उनके लिए 'मोरल पुलिस' बना रहता है तो दूसरी ओर उसी समुदाय से उसे कई बार यौन प्रताड़ना भी मिलती है। ऐसे परिवार जहां के पुरुष सदस्य किसी आर्थिक कार्य में संलग्न नहीं होते हैं, चाहे वो बेरोजगारी की वजह से हो, अक्षमता या बीमारी के कारण या फिर अपनी हैसियत के मुताबिक काम न मिलने के कारण, औरतों की स्थिति प्रायः तलाकशुदा और विधवा स्त्रियों से भी बुरी हो जाती है। हालात तब और बुरे हो जाते हैं जब उन्हीं की कमाई पर जीने वाले मर्द उन पर जुल्म ढाते हैं। वैसी अकेली महिलाएं जिनके पुत्र या तो अल्पवयस्क हैं या फिर उनसे अलग रहते हैं अक्सर पितृवादी हिंसा और भेदभाव की शिकार होती हैं।

2011 की जनगणना में महिलाओं द्वारा चलाए जाने वाले परिवारों को परिभाषित किया गया है जिनमें निम्न महिलाओं को शामिल

किया गया है :

- विधवा महिलाएं
- कानूनी रूप से अलग हुईं तलाकशुदा महिलाएं
- परित्यक्ता महिलाएं
- मानसिक अथवा शारीरिक प्रताड़ना के बाद घर से भागी हुई महिलाएं
- 35 वर्ष से अधिक की अविवाहित महिलाएं
- पति के साथ रहने वाली महिलाएं लेकिन यदि पति मानसिक रोगी अथवा शारीरिक रूप से अक्षम हो

2011 की जनगणना के मुताबिक, देश में 27 मिलियन परिवार ऐसे थे जिनकी मुखिया कोई महिला थी। यह संख्या समूचे परिवारों का 10.9 फीसद थी।

एकाकी महिलाओं द्वारा चलाए जाने वाले परिवार

देश में इस समय 49 लाख परिवार ऐसे हैं जो किसी अकेली महिला के नेतृत्व में चल रहे हैं। इनमें से तीन–चौथाई परिवार गांवों में जबकि अन्य शहरी इलाकों में हैं। सात राज्यों में महिलाओं द्वारा संचालित परिवारों की संख्या 20 फीसद से भी ज्यादा है। इनमें छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा और गुजरात शामिल हैं।

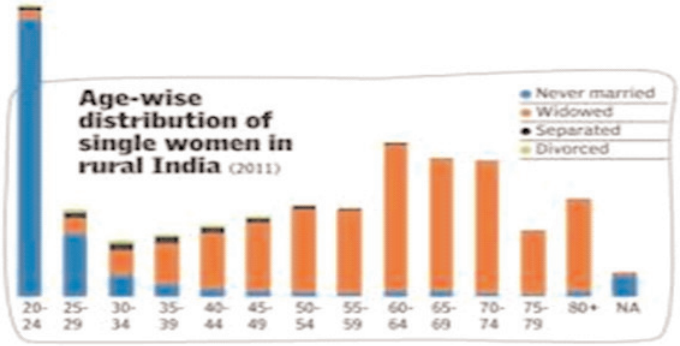

श्रोत : 2011 की जनगणना

ग्रामीण भारत में महिला संचालित परिवार

जनगणना रिपोर्ट बताती है कि अविवाहित महिलाओं की सबसे बड़ी संख्या 20 से 24 वर्ष के बीच है। इससे पता लगता है अब गांवों में भी लड़कियों के विवाह की आयु बढ़ने लगी है। गांवों में 35 वर्ष से अधिक की अकेली महिलाओं में विधवाओं की संख्या सबसे ज्यादा है। तलाकशुदा महिलाओं की संख्या नगण्य है क्योंकि गांवों में अभी भी तलाक का प्रचलन नहीं है। गांवों में सबसे अधिक जो प्रचलित है वो है पत्नी को छोड़ देना, उसका परित्याग कर देना लेकिन उनकी गणना शायद ही कभी की जाती है।

करीब 62 फीसद यानी 4.4 करोड़ अकेली महिलाएं गांवों में रहती हैं। पुरुष सदस्यों का प्रवास इसका सबसे बड़ा कारण है। गांवों से शहर, एक राज्य से दूसरे राज्य और दूसरे देशों तक कमाई की चाहत में पलायन करने वाले पुरुष अपने पीछे पत्नियों और बेटियों को छोड़ जाते हैं। महिलाओं को ही सभी सामाजिक एवं आर्थिक जिम्मेदारियों का वहन करना पड़ता है। गांवों में रहने वाली विधवाएं, परित्यक्ता या तलाकशुदा औरतों को समुदाय की प्रताड़ना का भी शिकार होना पड़ता है। उन्हें न केवल सामाजिक भेदभाव और बहिष्कार का सामना करना पड़ता है बल्कि प्रायः उन्हें डायन होने का आरोप झेलना पड़ता है और पति की संपत्ति से भी हाथ धोना पड़ता है। इनमें भी दलित और आदिवासी महिलाओं को तो अमानवीय स्थितियों से गुजरना पड़ता है और वे बहुधा तस्करी, वेश्यावृत्ति और बंधुआ मजदूरी की भेंट चढ़ जाती हैं।

शहरी भारत में महिला मुखियों वाले परिवार

शहरी क्षेत्रों में महिलाओं द्वारा संचालित परिवार अर्थव्यवस्था के पिरामिड के सबसे निचले स्तर पर हैं। शहरी भारत में 13.6 मिलियन विधवाएं हैं जबकि 12.3 मिलियन अविवाहित अकेली महिलाएं। यहां अकेली महिलाओं की संख्या में 58 फीसद तक की बढ़ोतरी हुई जो 2001 के 17.1 मिलियन की तुलना में बढ़कर 2011 में 27 मिलियन तक पहुंच गई। शहरों में अकली महिलाओं की बड़ी संख्या असंगठित सेक्टर में है जो घरेलू दाई, कचरा चुनने और ऐसे ही अन्य कामों में लगी हैं।

दिव्यांग अकेली महिलाएं

अकेली महिलाओं की श्रेणी में ऐसी महिलाएं सबसे उपेक्षित और दिखाई न देने वाली वे महिलाएं हैं जो पोषण, सेहत, शिक्षा और रोजगार से करीब–करीब पूरी तरह वंचित हैं और जो किसी न किसी प्रकार से अक्षम हैं। उन्हें केवल सरकार द्वारा प्रदत्त कुछ रियायतों और आरक्षणों के सहारे छोड़ दिया जाता है और यदि वे अनुसूचित जनजाति और जाति की हों तो हालात और भी बुरे हो जाते हैं। दिव्यांग औरतों को एक विशेष समूह का दर्जा देकर उन्हें हर योजना और कार्यक्रमों के जरिये मुख्यधारा में लाया जाना चाहिए तथा महिलाओं और बच्चों के लिए बनाए जाने वाले कार्यक्रमों में भी उनके लिए विशेष छूट होनी चाहिए।

एकाकी महिलाओं के लिए संस्थागत सहायता प्रणाली

महिला आंदोलनों की शुरुआत से ही अकेली महिलाओं का मुद्दा सबसे अहम रहा है। 1988 की श्रमशक्ति रिपोर्ट, नेशनल पर्सपेक्टिव प्लान फॉर वीमेन और असंगठित क्षेत्रों में उनकी भूमिका पर नेशनल कमीशन फॉर इंटरप्राइजेज की रिपोर्ट में अकेली महिलाओं की उत्तरजीविता, जीविका और सुरक्षा पर विशेष ध्यान देने की सिफारिश की गई है। 1990 के दशक से देश में अकेली महिलाओं ने संगठित होना शुरू कर दिया था। उनके समूहों को जल्दी ही एक साझा मंच मिला जिसे अखिल भारतीय एकल नारी संगठन का नाम दिया गया। यह नेटवर्क अकेली महिलाओं को परामर्श और सहायता तो प्रदान करता ही है, सरकार को उनके भूमि अधिकारों एवं अन्य अधिकारों की रक्षा करने

एवं उनके पक्ष में योजना बनाने और उन तक अकेली महिलाओं की पहुंच भी सुनिश्चित करता है। एकल नारी संगठन का सबसे अहम कार्य स्वयं सहायता समूह का निर्माण करना है जबकि अन्य सामाजिक दशाओं में जिला, राज्य एवं राष्ट्र स्तर पर एकजुट होना, यौन प्रताड़ना एवं उन सभी कुरीतियों का विरोध करना शामिल हैं जो स्त्री को प्रताड़ित और बहिष्कृत करती हैं। इन सबसे उपर यह संगठन अपनी सदस्यों के कौशल विकास के लिए कार्यक्रम बनाता है, उनकी नेताओं के लिए शिक्षा की व्यवस्था करता है, पंचायती राज संस्थाओं में एकल महिलाओं के लिए जेंडर बजट बनाता है तथा नई सदस्यों का मार्गदर्शन करता है। कह सकते हैं कि एकल नारी संगठन एक वैकल्पिक समुदाय का निर्माण करता है जिसमें सामाजिक दबाव और आर्थिक संकट के समय अकेली स्त्रियां एक–दूसरे का सहारा बनकर खड़ी हो जाती हैं।

प्रदर्शनों, याचिकाओं, रैलियों और समारोहों के माध्यम से संगठन ने अपनी मांगों को देशव्यापी और चर्चित बना दिया है। उनकी मांगों में अकेली वृद्धाओं के लिए पेंशन, अकेली महिलाओं के खिलाफ किये जाने वाले सामाजिक भेदभाव को समाप्त करना, डायन प्रथा जैसी कुरीतियों पर लगाम लगाना, राज्य जीविका आयोग एवं सभी गरीबी विरोधी कार्यक्रमों में अकेली महिलाओं पर विशेष ध्यान दिया जाना शामिल है। उनकी कुछ अन्य विशेष मांगों में निम्न शामिल हैं :

- विधवा स्त्रियों की बेटियों को वर्तमान में दस हजार की राशि दी जाती है जिसे बढ़ाकर 15 हजार किया जाय तथा साथ ही इस योजना का लाभ तलाकशुदा एवं परित्यक्ता महिलाओं की बेटियों को भी प्रदान किया जाय।
- राशन का लाभ एपीएल और बीपीएल की सभी श्रेणियों के परिवारों को दिया जाय
- शहरी इलाकों में महिलाओं की मदद के लिए रोजगार गारंटी योजना चलाई जाय
- राजस्थान में शराब की बिक्री पर रोक लगाई जाय क्योंकि यह महिलाओं पर हिंसा के सबसे प्रमुख कारणों में है
- एससी और एसटी की तर्ज पर अकेली महिलाओं और उनके बच्चों को भी उच्च शिक्षा में छात्रवृत्ति और सरकारी सब्सिडी का लाभ दिया जाना चाहिए।

अकेली महिलाओं का भविष्य सुरक्षित करने के लिए उठाए जाने वाले कदम

अकेली महिलाओं की सामाजिक सुरक्षा समय की मांग है। इससे भी बड़ी जरूरत है उनके लिए वृद्धावस्था पेंशन की व्यवस्था करना। बचत की कमी और किसी सहायता तंत्र का न होना इस बात की ओर स्पष्ट संकेत करता है कि गंभीर बीमारी या परिवार के कमाने वाले सदस्य की मौत हो जाने की स्थिति में अकेली महिलाओं के लिए कोई व्यवस्था नहीं है। ऐसे में कर्मचारियों के लिए स्वास्थ्य बीमा तथा अन्य बीमाओं की सुविधा वक्त की मांग है।

रोजगार के क्षेत्र में नई दृष्टि से काम किया जा रहा है। नौकरी के दौरान नए बहाल कर्मचारियों के कौशल विकास के लिए प्रशिक्षण कराए जा रहे हैं जो मानव संसाधन के विकास के अनुकूल हैं। घरेलू कार्य और कचरा प्रबंधन ही ऐसे क्षेत्र है जहां कौशल की क्षति हो रही है क्योंकि घरेलू काम करने वाली औरतें अपने वाक कौशल के साथ–साथ पारंपरिक कौशल को भी खोती जा रही हैं। मानव संसाधन विकास के लिए ये कार्य किसी तरह के निवेश को भी आकर्षित नहीं करते हैं।

सबसे बड़ी बात कि अर्थव्यवस्था में इस काम की रोजगार लागत न्यूनतम होने के कारण मजदूरों पर आसानी से नियंत्रण किया जा सकता है। यह सेक्टर अर्थव्यवस्था का सबसे सामंती सेक्टर है जिसे कौशल विकास, शिक्षा, सरकारी पहल और प्रशिक्षण के द्वारा विकसित करने और श्रम–श्रमिक तथा ठेकेदार के रिश्तों को परिमार्जित करने की जरूरत है।

राष्ट्रीय पुनर्जीवन कोष का असंगठित क्षेत्र तक विस्तार करने तथा कर्मचारियों का पुनर्प्रशिक्षण किया जाना आवश्यक है। कार्यस्थलों पर क्रेश की सुविधा हर कर्मचारी के लिए की जानी चाहिए चाहे वह महिला हो या पुरुष और चाहे वहां कितने भी कर्मचारी हों। असंगठित सेक्टर के कर्मचारियों के मानवाधिकारों की रक्षा करने तथा महिला कर्मचारियों के लिए काम की परिस्थितियों को मानवीय बनाने की दिशा में असंगठित क्षेत्र सामाजिक सुरक्षा अधिनियम, 2008 को लागू करना सबसे चुनौतीपूर्ण कार्य है।

स्वयं सहायता सबसे बड़ी सहायता है। अकेली महिलाओं को विभिन्न सोशल साइटों एवं मंचों व्हाट्सएप, फेसबुक, ट्विटर तथा ब्लॉग के जरिये अपने स्वयं सहायता समूह बनाने चाहिए जहां वे अपनी समस्याओं को साझा कर सकें और एक–दूसरे की मदद कर सकें। अकेली वृद्ध महिलाएं प्रायः अकेलापन का शिकार हो जाती हैं इसलिए उनके लिए हाफ–वे होम, ड्रॉप इन सेंटर और काउंसिलिंग की व्यवस्था होनी चाहिए।

आज के दौर में अकेली महिलाएं सदियों पुरानी बेड़ियों को तोड़ रही हैं और अपने करियर, समुदाय और सामाजिक जिम्मेदरियों को पूरी कुशलता से संभाल रही हैं। वे समान हालातों में जी रही सैकड़ों अकेली महिलाओं के लिए रोल मॉडल हैं।

अनदेखी

न सरकार को दिखतीं हैं न समाज को

ये अदृश्य औरतें

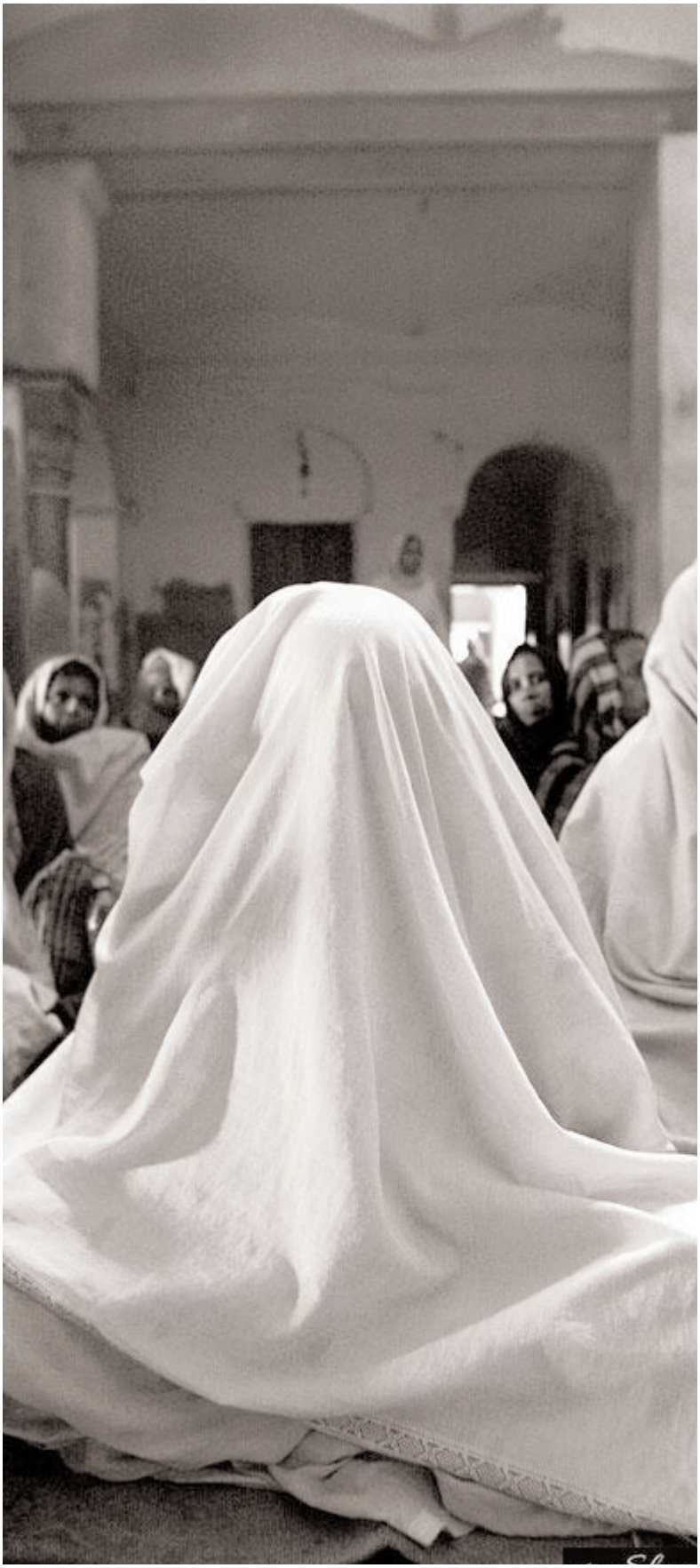

दीपिका झा

121 करोड़ की आबादी वाले हिन्दुस्तान में 4.4 करोड़ (जनगणना 2011) से अधिक उनकी संख्या है जिनके लिए ज्यादातर लोगों के मन में न सम्मान होता है और न ही प्रेम, जिनके हिस्से में आता है 'अभागी' का संबोधन और जिनकी पूरी जिंदगी तिरस्कार और बंदिशों के साये में बीत जाती है। इनकी दुनिया पति के जीवित रहने तक ही जीवंत होती है, उसके बाद मृतप्राय। भारतीय समाज ने ऐसी औरतों को 'विधवा' का नाम दिया है। दुख तो इस बात का है कि इस तिरस्कार और असम्मान के पीछे इनका कोई दोष नहीं होता, उन्हें यह सजा सिर्फ इसलिए दी जाती है क्योंकि इनके जीवित रहते इनके पति की मौत हो जाती है। हम भूल नहीं सकते जब प्राचीन भारत में पति की मौत के बाद उनकी पत्नियों को पति की चिता के साथ ही जल कर मर जाने के लिए विवश कर दिया जाता था और फिर उन्हें 'सती' घोषित कर इस कुप्रथा का महिमामंडन कर दिया जाता था। आज हमारे समाज ने सती जैसी प्रथाओं को तो नकार दिया है लेकिन विधवाओं को लेकर सोच अभी भी बहुत हद तक पुरातन ही है।

संयुक्त राष्ट्र ने भी माना है कि दुनिया में कोई ऐसा वर्ग नहीं है जिसे किसी और की मौत का पाप विधवाओं से अधिक ढोना पड़ा हो, लेकिन दुर्भाग्यपूर्ण ढंग से उन्हें ज्यादातर देशों ने अपने रिकॉर्ड और आंकड़ों से बाहर रखा है जिसके कारण उनकी सही स्थिति और हालात का पता नहीं चल पाता है। दुनिया भर में पिछले 25 वर्षों में गरीबी, विकास, स्वास्थ्य और मानवाधिकार पर जारी रिपोर्टों में शायद ही कभी विधवाओं के मानवाधिकारों और स्वास्थ्य की चर्चा की गई है। विधवाओं के हित में सरकारों ने कानून और

वर्ल्ड विडो रिपोर्ट : एक नजर

विधवाओं की हालत को संजीदगी से दुनिया के सामने लाने वाली लुम्बा फाउंडेशन संयुक्त राष्ट्र से मान्यता प्राप्त संस्था है जिसने भारत और अन्य देशों की विधवाओं के मानवाधिकारों तथा अन्य अधिकारों को लेकर 17 मार्च, 2016 को एक रिपोर्ट जारी की। इस रिपोर्ट ने विधवाओं के साथ हो रहे अत्याचार और अन्याय की पोल खोल कर रख दी। रिपोर्ट की कुछ मुख्य बातें यहां साझा की जा रही हैं :

- पूरे विश्व में विधवाओं की संख्या 258 मिलियन तथा उनके साथ प्रभावित बच्चों की संख्या 585 मिलियन है।
- इनमें से 38 मिलियन विधवाएं बेहद गरीबी में जी रही हैं और उनके पास मूलभूत सुविधाएं भी नहीं हैं।
- वर्ष 2010 के बाद से मध्य–पूर्व और उत्तरी अफ्रीका के क्षेत्रों में युद्ध की स्थितियां ज्यादा तेज हुई हैं, विशेषकर सीरिया में।
- इराक, अफगानिस्तान, दक्षिण सूडान, मध्य अफ्रीका और सीरिया में युद्ध की वजह से तो दूसरी ओर उत्तर–पूर्व नाइजीरिया, दक्षिण–पूर्व नाइजर, पश्चिमी चाड और उत्तरी कैमरून में बोको हरम के जुल्मों की सबसे ज्यादा शिकार विधवा महिलाएं हुई हैं। इन देशों में विधवाओं की स्थिति सबसे ज्यादा खराब है।
- अफ्रीका के सब सहारा क्षेत्रों में गंभीर रोग 'इबोला' के उपचार के दौरान विधवाओं को कुप्रथाओं का शिकार बनना पड़ा।
- इन देशों में पति की मौत के बाद स्त्रियों को पति के शव को धोकर उस पानी को पीने के लिए तथा किसी अनजान पुरुष के साथ सेक्स करने के लिए बाध्य किया जाता है जो उनमें एचआईवी जैसी असाध्य बीमारी का खतरा पैदा करता है।
- ज्यादातर विकासशील देशों में 10 से 17 वर्ष तक की बाल विधवाओं तथा केवल बेटियों वाली विधवाओं को भेदभाव और अत्याचार का सामना सबसे ज्यादा करना पड़ता है।
- अति निर्धन विधवा स्त्रियों को जीवित रहने के लिए समाज द्वारा तय यौन शर्तों को मानने के लिए बाध्य होना पड़ता है जो न केवल उन्हें 'एक्सचेंज सेक्स' का वाहक बना देता है बल्कि उन्हें गंभीर बीमारियों की चपेट में भी ला देता है।
- पश्चिम के विकसित देशों में भी विधवाओं को सामाजिक कल्याणकारी योजनाओं में कमी और असुरक्षा का सामना करना पड़ता है।
- ज्यादातर देशों में महिलाओं को अपने पति की मौत के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है और उनके साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता है।
- पति की मौत के बाद स्त्रियों को उनकी संपत्ति से बेदखल कर दिया जाता है और प्रायः घर से निकाल दिया जाता है।

योजनाएं बनाई हैं लेकिन इनकी जिंदगी सरकार के बनाये कानूनों के आधार पर नहीं बल्कि समाज और उसके ठेकेदारों के बनाये कानूनों के आधार पर चलती हैं। दुनिया भर में बच्चों और महिलाओं के मानवाधिकारों के उल्लंघन और भिक्षावृत्ति के पीछे सबसे बड़ी वजह विधवाएं हैं जिन्हें कानून और सामाजिक अधिकारों से वंचित रखा गया है। एक अनुमान के मुताबिक दुनिया में ऐसे 500 मिलियन बच्चे हैं जो अपनी माताओं के विधवा होने के कारण मानवाधिकार उल्लंघन और गरीबी के शिकार हुए हैं।

लुम्बा फाउंडेशन ने माना है कि रिपोर्ट में विधवाओं की जितनी संख्या बताई गई है वो असलियत से काफी कम है क्योंकि पिछले दस वर्षों में उनकी संख्या को लेकर न तो कोई आधिकारिक आंकड़ा जुटाया गया है और न ही कोई गंभीर अध्ययन किया गया है। इसके अलावा विधवाओं की गणना करते समय उन स्त्रियों को नहीं भुलाया जाना चाहिए जिनके पति या तो लापता हैं या जिन्हें जबरन बंधक बना लिया गया है। प्राकृतिक आपदा की अधिकता वाले क्षेत्रों में, सेना में काम करने वाले या युद्धरत देशों में ऐसी महिलाओं की संख्या लाखों में है जिनके पति किसी कारणवश लापता हैं। ऐसी महिलाओं को 'हाफ विडोज' या 'आधी विधवा' कहा जा सकता है।

एक स्त्री के विधवा होने की स्थिति स्वयं में ही इतनी पीड़ादायक है कि उससे उबर पाना असंभव सा होता है, तिस पर भी समाज की एकतरफा बंदिशें स्त्री को लाचार और विवश बनाने के लिए काफी होती हैं। ज्यादातर समुदायों और स्थितियों में पति की मौत के बाद स्त्री का संपत्ति पर से अधिकार पूरी तरह खत्म हो जाता है। वो अपने अधिकारों का इस्तेमाल करने से भी वंचित कर दी जाती है। आम तौर पर विधवाओं के साथ किये जाने वाले भेदभाव को हम निम्न प्रकार से जान सकते हैं:

- विरासत के विषम कानून विधवाओं के अधिकारों को सीमित करते हैं
- कानूनी रूप से विधवाओं को सशक्त बनाए जाने के बाद भी सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और परंपरागत बंदिशें उन्हें उनके अधिकारों का इस्तेमाल करने से रोकती हैं
- प्रायः विधवाओं की पहुंच न्याय तक नहीं हो पाती है
- विधवाओं को सरकार द्वारा प्रदत्त लाभों तथा योजनाओं की भी जानकारी बहुधा नहीं होती है
- विधवाओं को लेकर बनाई गई प्रथाएं धार्मिकता से इस हद तक बंधी होती हैं कि उन्हें तोड़ पाना मुश्किल हो जाता है।

भारत में लड़कियों के विवाह की आयु सामान्यतः कम है और जनगणना रिपोर्ट को मानें तो 2011 तक देश में 30 फीसद महिलाओं की शादी 18 की होने से पहले कर दी गई थी। उनमें भी 2.3 फीसद यानी 78.5 लाख से ज्यादा महिलाएं 10 वर्ष की होने से पहले ही ब्याह दी गई थीं। इससे इतर यह एक वैश्विक सत्य है कि महिलाओं की आयु पुरुषों की तुलना में अधिक होती है, ऐसे में भारत में कम उम्र में ही महिलाओं के

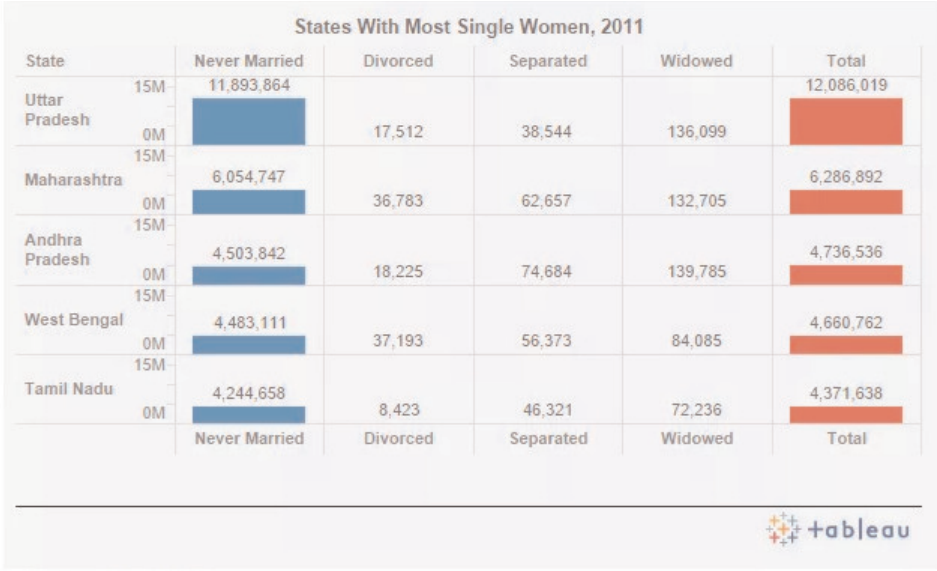

Source: Census 2011

21 अप्रैल 2017 को उच्चतम न्यायालय ने देश में विधवाओं को लेकर सरकार के रवैये पर कड़ी टिप्पणी की। अदालत ने कहा ''आप (सरकार) स्वयं कुछ करना नहीं चाहते और जब हम कुछ कहते हैं तो आप कहते हैं कि न्यायालय सरकार को चलाने की कोशिश कर रहा है।'' अदालत ने कहा कि सरकार देश में निराश्रित विधवाओं के लिए कुछ भी नहीं कर रही है। न्यायालय में विधवाओं पर सरकार का ध्यान दिलाने संबंधी याचिका 2007 से ही चल रही है जिसमें हर बार कोर्ट सरकार से गंभीर कदम उठाने के लिए कहता है और सरकार की ओर से उदासीनता दिखाई देती है। अदालत ने कहा कि आपको विधवाओं की चिंता नहीं है। आप अपने शपथ पत्र में कहते हैं कि आपको विधवाओं के बारे में पता नहीं है। ये शर्मनाक है।

विधवा होने की संभाव्यता बढ़ जाती है। वर्ष 2011 की रिपोर्ट में देश में विधवाओं की संख्या में अधिकाधिक वृद्धि पाई गई है। वर्ष 2001 में देश की कुल आबादी 201 करोड़ थी और तब यहां विधवाओं की संख्या केवल 0.7 फीसद थी जो 2011 में कुल जनसंख्या 121 करोड़ के मुताबिक बढ़कर 4.6 फीसद हो गई। दोनों वर्षों की रिपोर्ट में जो एक फर्क यह था कि 2001 में विधवाओं की संख्या में तलाकशुदा महिलाओं को भी जोड़ा गया था जबकि 2011 में विधवाओं की संख्या को बिल्कुल अलग से देखा गया था। हालांकि ज्यादातर अन्य गणनाओं में विधवाओं को स्थान नहीं दिये जाने के कारण हमारे पास उनकी संख्या जानने का और कोई विकल्प भी नहीं है। नीति निर्माताओं, शोधकर्ताओं, मानवाधिकार कार्यकर्ताओं, महिला अधिकारों के लिए आंदोलनरत लोगों, सरकार और अंतरराष्ट्रीय एजेंसियों द्वारा भी विधवाओं को लगातार उपेक्षित किये जाने के कारण उनके बारे में आंकड़े और जानकारियां जुटा पाना बेहद मुश्किल है। ऐसे में अब जरूरी है कि समाज के हर वर्ग और स्तर पर विधवा महिलाओं की स्थिति जानने और उनके लिए रोजगार और संसाधनों के अवसर बढ़ाने के लिए गंभीरता से काम किया जाय। दुनिया भर के महिला आंदोलनों में लंबे समय से इस बात की मांग की जा रही है कि पहचान पत्रों और सरकारी दस्तावेजों में 'वैवाहिक स्थिति' का कॉलम हटाया जाय ताकि महिलाओं की अपनी वास्तविक पहचान सामने आ सके। भारत जैसे देशों में औरत का विवाहित होना ही उसकी पूर्णता का प्रतीक माना जाता है। वे औरतें जो अकेली हैं, अविवाहित हैं, तलाकशुदा या परित्यकता अथवा विधवा हैं, सम्मान और अवसर पाने की अधिकारी नहीं होतीं। दस्तावेजों से वैवाहिक स्थिति का कॉलम हटा देने से कई मौकों पर उनके साथ होने वाले भेदभाव को रोका जा सकेगा।

संयुक्त राष्ट्र की पत्रिका 'वुमेन 2000' ने पहचान पत्रों तथा सरकारी दस्तावेजों से वैवाहिक स्थिति हटाने की अवस्था में सरकारों से ऐसी नीतियों के निर्माण की अपेक्षा की है जो महिलाओं और विशेषकर विधवा तथा अकेली महिलाओं के आंकड़े जुटाने और उनके संबंध में आवश्यक योजनाओं को लागू करने में सक्षम हो सके। फरवरी 2001 में लंदन में हुए 'विडोज विदाउट राइट्स कांफ्रेंस' के घोषणा पत्र में विधवाओं की छिपी हुई विपदा को जाहिर करने और उनके विरुद्ध होने वाले मानवाधिकार के उल्लंघन के मामलों को सामने लाने के लिए कई अनुशंसाएं की गई हैं। इसमें कहा गया कि दुनिया के कई विकसित और विकासशील देशों में सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक परंपराओं तथा विश्वासों के कारण विधवाओं तथा बाल विधवाओं को ऐसी यातनाओं से गुजरना पड़ता है जिन्हें किसी भी सूरत में मानवीय नहीं कहा जा सकता है। कांफ्रेंस में पारित कुछ प्रस्ताव इस प्रकार थे

:

- विधवाओं के खिलाफ होने वाले अमानवीय कृत्यों को रोकने तथा उन पर अत्याचार करने वाले लोगों के खिलाफ सख्त कानून बनाए जाएं और उनका अनुपालन अनिवार्य किया जाय
- विधवाओं के साथ भेदभाव तथा उन पर अत्याचार थोपने वाले धार्मिक, पारंपरिक तथा आधुनिक–किसी भी प्रकार के कानून अथवा प्रक्रिया को प्रतिबंधित किया जाय
- उत्तराधिकार संबंधी कानूनों तथा भूमि संबंधी अधिकार प्रदान करने वाले कानूनों को बनाया जाय और उनका अनुपालन सुनिश्चित कराया जाय
- युवा एवं वृद्ध विधवाओं की स्थिति जानने के लिए स्वतंत्र शोध कार्यक्रमों को प्रोत्साहन दिया जाय
- सरकार की नीति निर्माण के प्रत्येक स्तर पर विधवाओं को केन्द्र में रखा जाय
- स्थानीय, राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर समय–समय पर विधवाओं की स्थिति पर चर्चा करने के लिए बैठक की जाय
- सभी योग्य अंतरराष्ट्रीय तंत्रों में विधवाओं के अधिकारों को शामिल किया जाय।

.....मगर इनकी जंग तो जारी है!

- 1914 से 1918 तक चला पहला विश्व युद्ध अपने पीछे 3 से 4 मिलियन विधवाओं को छोड़ गया था। युद्ध में शामिल 9.7 मिलियन सैनिकों में करीब एक–तिहाई सैनिक या तो मारे गए या लापता हो गए। इनमें से लगभग सभी अपने पीछे विधवा पत्नी और दो बच्चे छोड़ गए।
- यूएनएचसीआर की रिपोर्ट के मुताबिक, सीरियाई शरणार्थियों में से 1,45,000 परिवारों को विधवाएं संभाल रही हैं।
- इराक में विधवाओं की संख्या एक मिलियन से लेकर 4 मिलियन तक है जो देश की कुल वयस्क महिलाओं का 10 प्रतिशत है। इनमें बाल विधवाओं का आंकड़ा शामिल नहीं है।
- कुर्दिस्तान में सीरिया और इराक से आए शरणार्थियों के अलावा 50,000 से अधिक कुर्दिश विधवाएं हैं जो 1988 में हुए हलब्जा केमिकल हमले में जिंदा तो बच गई थीं लेकिन आज भी उनकी जिंदगी मौत से कम नहीं है।
- लेबनान सीरिया के 1.3 मिलियन निबंधित शरणार्थियों का घर है जिसमें से 80 फीसद महिलाएं हैं और उनमें भी ज्यादाता या तो विधवा हैं या 'लापता' हुए लोगों की असहाय पत्नियां।
- गाजा में दो–तिहाई औरतें विधवा हैं।
- 2010 में हुए एक अध्ययन में बताया गया कि भारत के युद्धग्रस्त जम्मू–कश्मीर में 32 हजार विधवाएं हैं तथा 97 हजार बच्चे अनाथ हैं।

यहां दिये गये आंकड़ों में दो समानताएं हैं। एक, ये सभी युद्धग्रस्त क्षेत्र या देश हैं तथा दूसरा, इन सबमें विधवाएं हैं। 'वार विडोज' अथवा 'शहीदों की विधवाएं' के नाम से संबोधित की जाने वाली यह बिरादरी कभी न तो सरकारी एजेंडों में रही और न ही विकास के पैमानों में। हां, जिस एक जगह इन्हें स्थान मिला, वो था समाज के बनाए प्रतिबंधों और कानूनों में। युद्धग्रस्त इलाकों में इनकी स्थिति और भी खराब हो जाती है क्योंकि वहां इन्हें अक्सर जंग लड़ रहे सैनिकों के मन बहलाव का भी साधन बनना पड़ता है और जिसे किसी न किसी प्रकार से जायज ठहरा दिया जाता है। भारत में राष्ट्रीय महिला आयोग की पूर्व अध्यक्ष और देश में विधवाओं के पुनर्वास के लिए समर्पित ढंग से काम कर रहीं डॉ. वी. मोहिनी गिरी ने ठीक ही कहा है कि ''विधवा होना सामाजिक मौत हो जाने के समान है, यहां तक कि उच्च वर्ग में भी।''

ज्यादातर भारतीय समाजों में विधवा बहू की शादी देवर के साथ करा दी जाती है। इसमें विधवा स्त्री के प्रति कोई सहानुभूति की भावना नहीं होती बल्कि संपत्ति परिवार में ही रह जाए, इसका ख्याल रहता है। क्योंकि अगर विधवा बहू परिवार के बाहर शादी करती है तो संपत्ति का आधा हिस्सा कानूनन उसके साथ ही चला जाएगा। पहले, सरकार ने भी इस प्रकार की शादियों को प्रोत्साहन दिया जिसमें कहा गया कि अगर विधवा अपने देवर से विवाह करती है तो वह पेंशन पाने की अधिकारी होगी अन्यथा परिवार से बाहर विवाह करने पर इसकी अधिकारी नहीं होगी। 1996 से पहले, परिवार से बाहर विवाह करने वाली विधवाओं को पेंशन का लाभ नहीं मिलता था। लेकिन हमारे देश में ज्यादातर वार विडोज 1996 से पहले की थीं, तो उन्हें इस लाभ से वंचित होना पड़ा अथवा बच्चों की परवरिश की विवशता में पति के भाई के साथ शादी करनी पड़ी। हालांकि इस दिशा में लगातार प्रयास और आंदोलन होते रहे जिनके बाद 2006 में परिवार के बाहर शादी को मान्यता मिली और विधवाओं को अपने पूर्व पति से पेंशन मिलते रहने का मार्ग प्रशस्त हुआ। वर्ष 2016 में महाराष्ट्र सरकार ने घोषणा की कि विधवा स्त्री को परिवार से बाहर विवाह करने पर भी पूर्व पति के जीवित रहते तक पेंशन प्राप्त होता रहेगा जबकि विधुर को पूर्व पत्नी की पेंशन उसकी मृत्यु तक अथवा दोबारा विवाह कर लेने तक

मिलती रहेगी।

पेंशन तक विधवाओं का पहुंच पाना ही बहुत मुश्किल काम होता है। प्रायः उन्हें न तो पेंशन की जानकारी होती है और न ही उस व्यक्ति की जिनके पास से उन्हें सहायता मिलनी है। सुप्रीम कोर्ट में एक ऐसा ही मामला आया जब एक सैनिक की 90 वर्ष की विधवा पुष्पवंती देवी को पेंशन के नाम पर हर महीने केवल 70 रुपये मिलते थे। पुष्पवंती अपने मामले को उच्चतम न्यायालय लेकर गई जहां से उसे 18,000 रुपये प्रतिमाह पेंशन देने का आदेश प्राप्त हुआ। न्यायालय ने भी माना कि सैनिकों की विधवाओं के पेंशन के हजारों मामले कोर्ट में लंबित हैं और उन्हें शीघ्र निबटाए जाने की आवश्यकता है।

शहीदों की विधवाओं के पेंशन का निर्धारण करने में भी कई प्रकार के भेदभाव हैं। कारगिल युद्ध में शहीद सैनिकों की विधवाओं को दी गई पेंशन और अन्य सुविधाएं 1971 और 1965 के युद्ध के शहीदों की विधवाओं को मिली राशि से कहीं अधिक है। 1972 के युद्ध की विधवाओं को इस बात का मलाल भी है कि उन्हें सम्मानित करने के लिए राजनीतिक मंचों पर तो कई बार बुलाया जाता है लेकिन उनकी वास्तविक स्थिति से किसी को वास्ता नहीं है। 1965 के भारत–पाकिस्तन जंग में अपने पति प्यारा सिंह को खो चुकीं बंत कौर तथा 1962 के भारत–चीन युद्ध में शहीद हुए जंगीर सिंह की पत्नी सुरजीत कौर ने पेंशन और अन्य सुविधाओं की मांग को लेकर 2016 में पटियाला में धरना दिया और उनका साथ 20 और शहीदों की विधवाओं ने दिया। अनुमान के मुताबिक, सिर्फ पंजाब के पटियाला में ही शहीदों के विधवाओं के पेंशन के 60 मामले लंबित हैं।

अपने पति की तस्वीरों को लेकर धरना देतीं बंत कौर और सुरजीत कौर।

राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा कराए गए एक सर्वे में पाया गया कि देश में केवल कुछ ही जिला सैनिक कल्याण बोर्ड हैं, जो कंप्यूटराइज्ड हैं और जिनके पास शहीद सैनिकों का पूरा ब्योरा है। ज्यादातर जिला सैनिक कल्याण बोर्ड बिना अद्यतन जानकारी के काम कर रहे हैं, ऐसे में उनसे सहायता की उम्मीद नहीं की जा सकती है। बोर्ड से अपेक्षा होती है कि वो शहीद सैनिकों की विधवाओं के पास स्वयं जाकर उनकी जरूरतों और सुविधाओं का ध्यान रखें जबकि वास्तव में सर्वे के मुताबिक 68 प्रतिशत विधवाओं को खुद ही बोर्ड से संपर्क करना पड़ता है। उनमें भी ज्यादातर विवादित मामलों में बार्ड विधवाओं को परिवार में ही विवाह कर लेने के लिए बाध्य करते हैं ताकि उन्हें लंबी कागजी

हाफ विडोज

2009 में गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्ड ने कश्मीर को 'इस ग्रह का सबसे अधिक सैन्य उपस्थिति वाला विवादित क्षेत्र' करार दिया था। कश्मीर घाटी में करीब 5 लाख भारतीय फौजी मौजूद हैं। ट्रिब्यून ब्लॉगर हमजा मन्नन के मुताबिक, 1990 के बाद से अब तक यहां करीब 70 हजार कश्मीरी मारे जा चुके हैं, हजारों लापता हो गए हैं और अनगिनत महिलाएं और बच्चे विधवा व अनाथ हो गए हैं। कश्मीर में लापता हुए लोगों की बीवियों को 'हाफ विडोज' यानी 'आधी विधवा' का नाम दिया गया है। 'दिवायर डॉट इन' में सिंधुजा पार्थसारथी ने इन हाफ विडोज के दर्द को श्रीनगर से 140 किलोमीटर उत्तर में स्थित कुपवाड़ा के दर्दपुरा गांव की आंखों से देखा है। पता नहीं नाम का असर है या फिर इन विधवाओं के दर्द का, पर यह जगह दुःख और आंसुओं में डूबा है। 'दि एसोसिएशन ऑफ पेरेंट्स ऑफ डिसएपीयर्ड पर्सन्स' के अनुसार, 1989 से अब तक कश्मीर में 8000 से लेकर 10000 तक लोग लापता हुए हैं, जिनके कारण 1500 महिलाएं हाफ विडो बनने के लिए मजबूर हैं। इनमें से भी 150 से अधिक महिलाएं सिर्फ दर्दपुरा में हैं। हालांकि सरकार इससे सहमत नहीं है और उसका मानना है कि केवल 4000 पुरुष ही लापता हैं।

हाफ विडो उन महिलाओं को कहा जाता है जिनके पति लापता हो गए हैं और उनकी मौत की पुष्टि नहीं हुई है। ऐसी महिलाओं की पूरी जिंदगी नर्क बनकर रह जाती है। उन्हें विधवाओं के मिलने वाले सरकारी लाभ तो नहीं ही मिलते समाज और परिवार भी उनसे कन्नी काटने लगता है। कभी–कभी ऐसी महिलाएं गहरे अवसाद में भी चली जाती हैं। 4000 कश्मीरी स्त्री–पुरुषों के साथ किये गए एक सर्वे में एक्शन एड ने पाया कि 14 प्रतिशत लोग गंभीर मानसिक रोग के शिकार हैं जिनमें से सबसे ज्यादा लोग अवसादग्रस्त हैं। पॉल डिसूजा और अमन ट्रस्ट द्वारा कराए गए एक अध्ययन से पता चलता है कि कश्मीर की 92 प्रतिशत हाफ विडोज सामाजिक,

वार विडोज–हाफ विडोज

कार्रवाइयों से छुटकरा मिल सके। इसके अलावा संसाधनों के मामलों में भी वे बहुत पिछड़े हैं।

विधवा होना भारत में औरतों के लिए सबसे बड़ा अभिशाप है। मौत पति की नहीं होती बल्कि उसके साथ उस स्त्री की भी हो जाती है जो कानून और धर्म के आधार पर उसकी अर्द्धांगिनी मानी जाती है। पति चाहे साधारण नागरिक हो या देश की सीमा पर जान की बाजी लगाने वाला वीर सैनिक, उनकी विधवाओं की नियति समान ही होती है। अपने पति के मृत शरीर को अंतिम सलामी देती देश की ज्यादातर अशिक्षित विधवाओं को न तो अपनी सुरक्षा और भविष्य के लिए बनाई गई सरकारी योजनाओं की जानकारी होती है और न ही समाज से इसके लिए लड़ने का हौसला। ऐसे में जरूरत है ऐसी पहल की जो उनकी काउंसिलिंग कर सके और उन्हें उनके कानूनी अधिकारों और सामाजिक सम्मान को दोबारा हासिल करने में मदद कर सके।

वार विडोज एसोसिएशन और आर्मी वाइव्स वेलफेयर एसोसिएशन जैसे संगठन शहीदों की विधवाओं को कानूनी और मनोवैज्ञानिक सहयोग देने के काम में लगी हैं। शहीदों की विधवाओं को दी जाने वाली सरकारी मदद प्रायः उसके ससुराल वालों द्वारा हड़प ली जाती है और पीड़ित महिला को कुछ भी हासिल नहीं हो पाता है। 'दि गिल्ड ऑफ सर्विस' ने 1962, 1965 और 1971 में लड़ी गई लड़ाइयों में शहीद हुए सैनिकों की विधवाओं पर एक अध्ययन करवाया था जिसके बारे में बताते हुए उपाध्यक्ष डॉ. वी. मोहिनी गिरी ने एक साक्षात्कार में कहा था कि शहीदों की विधवाओं की आर्थिक आवश्यकताएं बढ़ गई है, उनकी प्रवृत्ति बदली गई है और भविष्य दुश्कर बन गया है।

आर्मी वाइव्स वेलफेयर आर्गेनाइजेशन के मुताबिक, देश में वार विडोज के अलावा फौजी मिशनों में जान गंवाने वाले सैनिकों की संख्या भी बहुत है। ऑपरेशन पवन, ऑपरेशन मेघदूत और ऑपरेशन राइनो तथा बजरंग जैसे मिशनों में भी सैकड़ों सैनिकों की मौत हो चुकी है और उनकी विधवाएं सरकारी व सामाजिक सहायता से वंचित हैं।

जम्मू–कश्मीर के आतंकवाद प्रभावित क्षेत्रों में विधवाओं की संख्या देश में सर्वाधिक है। शहीद सैनिकों के अलावा आतंकवाद की भेंट चढ़े युवाओं के मारे जाने के बाद उनकी विधवाओं को असहनीय पीड़ा झेलनी पड़ती है। प्रसिद्ध समाजशास्त्री प्रो. बशीर अहमद डाबला ने कुछ वर्ष पहले कश्मीर की विधवाओं और अनाथ बच्चों पर एक अध्ययन किया था जिसमें उन्होंने पाया कि विधवाओं को सबसे बड़ी कमी आश्रय की होती है। पति के मरने के बाद न तो ससुराल वाले और न ही मायके वाले उनकी कोई खास मदद करते हैं। शिक्षा दूसरा बड़ा नुकसान है। पिता का साया सिर से उठते ही सबसे पहले बच्चे की पढ़ाई बंद करा दी जाती है। इसके बाद, सामाजिक बंधनों, असुरक्षा, स्वास्थ्य और दूसरों पर निर्भर रहने की विवशता उन्हें मनोवैज्ञानिक रूप से तोड़ देती हैं। अनाथ बच्चों को प्रायः मजदूरी करना पड़ता है। प्रो. डाबला कहते हैं कि अगर इन बच्चों और महिलाओं के लिए गंभीरता से कुछ नहीं किया गया तो इनका भविष्य खतरे में पड़ सकता है। उनका कहना है कि यहां युवा विधवाओं तथा बेटियों के विवाह की योजना के तहत आज तक एक भी विवाह नहीं कराया जा सका है।

आर्थिक, जेंडर संबंधी, सांस्कृतिक तथा स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से विवश और लाचार हैं।

अल जजीरा ने कश्मीर की हाफ विडोज पर कहा है कि उनकी पूरी जिंदगी अपने खोये हुए पति की तलाश में बीत जाती है। ज्यादातर लोगों को या तो आतंकवादी ले जाते हैं या सेना। एक बार जाने के बाद उनके लौटने की संभावना क्षीण हो जाती है। बीवी फातिमा के पति विलायत शाह 1993 में काम की तलाश में घर से निकले थे लेकिन लौट कर नहीं आए। वे कहती हैं कि पति की तलाश वो केवल अपने स्तर पर ही कर सकती हैं, उन्हें न तो किसी संस्था की जानकारी है और न ही सरकारी मदद की। ऐसी महिलाओं को पेंशन, राशन कार्ड, बैंक खाते बनवाने अथवा पति की संपत्ति का हस्तांतरण करवाने जैसे कामों में चुनौतियों का सामना करना पड़ता है क्योंकि इन सबके लिए पति की मौत का सर्टिफिकेट जमा करना पड़ता है जो उनके पास नहीं होता। 'दि प्लाइट ऑफ कश्मीरी हाफ विडोज' में दीया भट्टाचार्य ने लिखा है कि इस्लाम के नियमों के मुताबिक, विधवा जिनके बच्चे हों, पति की संपत्ति का आठवां हिस्सा पाने की हकदार होती हैं जबकि बिना बच्चों वाली विधवा को एक–चौथाई संपत्ति प्राप्त होती है लेकिन हाफ विडोज के लिए कोई नियम नहीं है, उन्हें कुछ भी हासिल नहीं होता।

विडंबना ये है कि सरकार के पास हाफ विडोज के बारे में कोई आंकड़ा नहीं है, है तो सिर्फ एक रिपोर्ट 'हाफ विडोज, हाफ वाइव्स'। यह रिपोर्ट उत्तरी कश्मीर के बारामूला जिले में कराए गए एक सर्वे के आधार पर तैयार की गई थी। मानवाधिकार कार्यकर्ता कहते हैं कि कश्मीर के कब्रिस्तानों में 2700 अनजान लोग दफन हैं। अगर उन लाशों को निकलवा कर डीएनए टेस्ट के जरिये उनकी पहचान कराई जाय तो इससे 10 हजार लोग जो लापता हैं, उनके परिवारों को रोज–रोज की पीड़ा से मुक्ति मिलेगी और कितनी ही हाफ विडोज की तपस्या खत्म हो जाएगी।

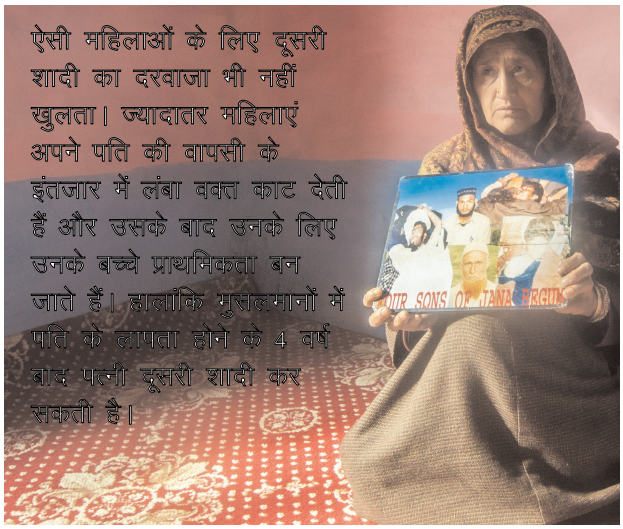

हुकूमतें अलग–अलग मगर हालात एक हैं

दुनिया में विधवाओं की संख्या करीब 258 मिलियन है इसके बावजूद उनकी समस्याएं और उनका दर्द आज भी ढंका–छिपा हुआ है। लगभग सभी देशों में उनकी स्थिति कमजोर है और उन्हें कई सामाजिक बंदिशों और रिवाजों का सामना करना पड़ता है। दुनिया भर में लैंगिक समानता और मानवाधिकारों की बातें तो बहुत की गईं लेकिन विधवाओं के बारे में बात करना किसी ने भी मुनासिब नहीं समझा।

संयुक्त राष्ट्र ने वर्ष 2011 में 23 जून को अंतरराष्ट्रीय विधवा दिवस घोषित किया। इसका उद्देश्य विधवाओं और उनके बच्चों पर संयुक्त राष्ट्र एवं अन्य अंतरराष्ट्रीय संगठनों की प्रणाली के जरिये विशेष ध्यान देना था। जाहिर तौर पर विधवाओं की स्थिति पूरे विश्व में दोयम दर्जे की है और इसी को मद्देनजर रखते हुए संयुक्त राष्ट्र को उनके लिए एक विशेष तिथि की घोषणा करनी पड़ी। अंतरराष्ट्रीय विधवा दिवस के लिए लुम्बा फाउंडेशन ने पहल की और अंततः उसे अपने प्रयासों में सफलता मिली।

दुनिया में विधवाओं की संख्या करीब 258 मिलियन है इसके बावजूद उनकी समस्याएं और उनका दर्द आज भी ढंका–छिपा हुआ है। लगभग सभी देशों में उनकी स्थिति कमजोर है और उन्हें कई सामाजिक बंदिशों और रिवाजों का सामना करना पड़ता है। दुनिया भर में लैंगिक समानता और मानवाधिकारों की बातें तो बहुत की गईं लेकिन विधवाओं के बारे में बात करना किसी ने भी मुनासिब नहीं समझा। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सबसे पहले 2002 में दक्षिण एशिया की विधवाओं को लेकर एक कांफ्रेंस आयोजित की गई थी। इसमें उनकी पीड़ाओं और समस्याओं को पहली बार बड़े स्तर पर दुनिया के सामने रखा गया था। जामिया मिलिया विश्वविद्यालय की रिसर्च एसोसियेट शिप्रा राज ने विधवाओं को लेकर किये अपने एक अध्ययन में बताया कि विश्व की विधवाओं में से 115 मिलियन अत्यधिक गरीबी में जी रही हैं। यूं तो विधवाओं का ध्यान रखने में हर देश नाकाम रहा है लेकिन फिर भी दक्षिण एशिया और अफ्रीका के देशों में उनकी दशा ज्यादा ही खराब है।

अफ्रीका – अफ्रीकी देशों में विधवाओं के बीच एचआईवी संक्रमण के मामले तेजी से सामने आ रहे हैं। दक्षिण अफ्रीका में 10 से 24 वर्ष के बीच की लड़कियों के संक्रमित होने का खतरा पांच गुना तक ज्यादा है। इसके पीछे कुछ समुदायों में फैली यह भ्रांति है कि यदि अधिक उम्र के एचआईवी संक्रमित पुरुष छोटी उम्र की लड़कियों अथवा कुंवारी लड़कियों के साथ यौन संबंध स्थापित करें तो उनका संक्रमण ठीक हो जाएगा या भविष्य में कभी वे इस रोग की चपेट में नहीं आएंगे। इस भ्रांति के कारण यहां बाल विवाह और बच्चियों के साथ बलात्कार के मामले बढ़े हैं। एचआईवी संक्रमित पुरुषों के बचने की संभावना क्षीण होती है जिससे उनके साथ विवाह करने वाली बच्चियां न केवल छोटी उम्र में ही विधवा हो जाती हैं बल्कि अपने साथ एचआईवी के संक्रमण को ढोती चलती हैं। एक अध्ययन के मुताबिक, 15 वर्ष और उससे अधिक उम्र की हर 10 में से एक अफ्रीकन लड़की विधवा है और इनमें से ज्यादातर अपने घरों को खुद ही संभालती हैं। कुछ अन्य अध्ययनों में पाया गया कि –

- माली में ज्यादातर विधवाएं गरीब घरों की संचालिका हैं और उनके स्वास्थ्य और पोषण की स्थिति दूसरी विवाहित महिलाओं की तुलना में खराब है।
- नाइजीरिया में उत्तराधिकार के कानून और अन्य सामाजिक प्रथाओं के कारण विधवाओं की स्थिति

अलग–अलग देशों की विधवाओं से एकत्रित किये गये कुछ वक्तव्य

- हमें बुरी छाया माना जाता है। हमें हर अच्छे मौकों से अलग रखा जाता है। **(लक्ष्मी, राजस्थान, अपराजिता पत्रिका, 1995)**
- हमारे साथ जानवरों की तरह बर्ताव किया जाता है क्योंकि हम विधवाएं हैं। **(एंजेला, नाइजीरिया, 1999)**
- मुझे 'डायन' कहा जाता है जिसने अपने पति की जान ले ली। **(तेरेजिन्हा, मोजाम्बिक, 1997)**
- मुझे और मेरे बच्चों को घर से बाहर निकाल दिया गया और मेरे देवर ने हम सबकी पिटाई की। **(सिओढ़ी, मालावी, 1994)**

बेहद खराब है।

● सेनेगल में पुनर्विवाह की अनुमति के कारण विधवाओं के लिए अच्छे अवसरों की संभावना रहती है। हालांकि उनमें भी आधी से ज्यादा विधवाएं अपने पति के भाई के साथ विवाह करती हैं ताकि उनके बच्चों को पिता की संपत्ति का लाभ मिल सके।

दक्षिण एशिया – बांग्लादेश – संयुक्त राष्ट्र की पत्रिका 'वुमेन 2000' में कहा गया है कि बांग्लादेश में मुस्लिम विधवाओं की स्थिति कुछ मायनों में हिंदु विधवाओं की तुलना में अच्छी है। कुरान दोबारा विवाह की बात करता है और विधवा को संपत्ति से बेदखल करने की इजाजत नहीं देता है। शरिया के मुताबिक, औरत को उसके पति की संपत्ति का आठवां और अपने पिता की संपत्ति में से आधा हिस्सा लेने का हक है। बांग्लादेश में तमाम कानूनों के बाद भी बहुत कम विधवाओं को ही संपत्ति में जायज हिस्सा मिल पाता है। ज्यादातर ग्रामीण विधवाओं को अपने ससुराल वालों से कुछ भी नहीं मिल पाता है अक्सर हिंसा का शिकार बनना पड़ता है। उन्हें घर से निकाल दिया जाता है और उनके हिस्से में कुछ भी नहीं आ पाता है। 1995 में किये गये एक सर्वे में पता चला कि कुल उत्तरदाताओं में से केवल 25 प्रतिशत विधवाओं को ही अपने पिता की संपत्ति में से हिस्सा मिल पाया और केवल 32 प्रतिशत को अपने पति से। लगभग सभी उत्तरदाताओं के बीच जो एक बात सामान्य थी वो ये कि सभी को पति के रिश्तेदारों की तरफ से प्रताड़ना और हिंसा झेलनी पड़ी। कई बांग्लादेशी विधवाओं को घरेलू दाई का काम करना पड़ता है। बांग्लादेश में भी बाल विवाह और बाल विधवाओं की मौजूदगी असामान्य नहीं है। ज्यादातर पुरुष उम्रदराज होने के बाद दूसरी शादी करते हैं क्योंकि वे अपनी पहली पत्नी को संतान पैदा करने और सेक्स के लिए और सक्षम नहीं पाते हैं। जाहिर है वे युवा लड़कियों की तलाश में रहते हैं और उस समय गरीब घर के लोग अपनी छोटी उम्र की बेटियों की शादी उनके साथ करने के लिए राजी हो जाते हैं। ऐसी बच्चियों के जल्दी विधवा हो जाने की आशंका भी बहुत ज्यादा होती है।

नेपाल – नेपाल लड़कियों और बच्चियों की तस्करी के लिए पहले से ही कुख्यात रहा है। ऐसी विधवा बच्चियां जिनके साथ कोई पुरुष सदस्य न हो या जिनका किसी स्कूल में निबंधन नहीं कराया गया है, प्रायः तस्करी का शिकार हो जाती हैं। नेपाल में विधवाओं को दी जाने वाली सरकारी सहायता भी बहुत कम थी और यह 60 वर्ष से अधिक की विधवा स्त्रियों को ही प्राप्त हो सकती थी लेकिन अकेली महिलाओं के लंबे संघर्ष के बाद अब सुप्रीम कोर्ट ने सरकार द्वारा दी जाने वाली मासिक सहायता राशि को हर उम्र की विधवाओं के लिए अनिवार्य बना दिया है। इसे वहां विधवाओं के लिए बड़ी राहत कहा जा सकता है।

पाकिस्तान – पत्रिका 'वुमेन 2000' कहती है कि पाकिस्तान में विधवा स्त्रियों को जकात या छोटी पेंशन की सुविधा दी जाती है। लेकिन जैसे कि भारत में सारा तंत्र भ्रष्टाचार की भेंट चढ़ जाता है ठीक वैसे ही पाकिस्तान में भी विधवाओं को कुछ भी हासिल नहीं हो पाता है। पत्रकार फरहान जैदी 'ब्लॉग्स.ट्रिब्यून.कॉम' में लिखती हैं कि पाकिस्तान में एक बड़ी आबादी आज भी निबंधित नहीं है तो ऐसे में विधवाओं की सही संख्या का पता लगाना लगभग नामुमकिन है। उनके मुताबिक, पाकिस्तान में विधवाओं के सामने दो मुख्य समस्याएं हैं– सामाजिक अवस्था और सम्मान में कमी तथा आर्थिक दरिद्रता और गरीबी।

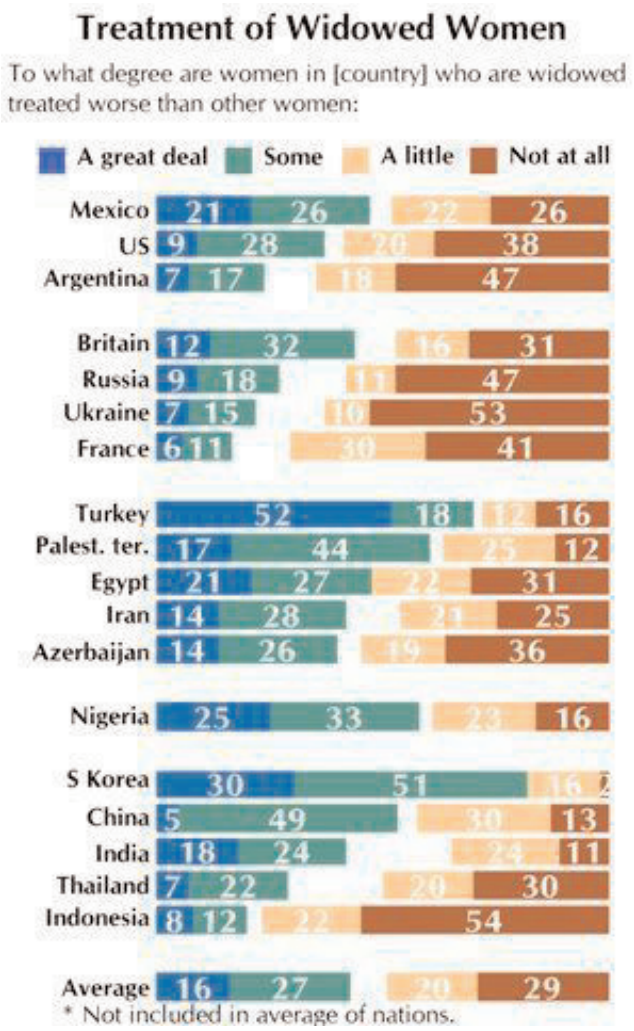

श्रोत : लुम्बा फाउंडेशन

अफगानिस्तान : 2001 में संयुक्त राष्ट्र ने आकलन कर कहा था कि अफगानिस्तान में करीब दो मिलियन 'वार विडो' हैं जिनमें से करीब 40,000 केवल काबुल में ही हैं। अफगानिस्तान लंबे समय से तालिबान के प्रभुत्व में रहा है और वह अपनी कट्टरता के लिए कुख्यात है। विधवाओं को तालिबानी हुकूमत की दोहरी मार पड़ी क्योंकि एक तो पहले ही तालिबान औरतों के नौकरी करने या बच्चियों की शिक्षा के खिलाफ था और दूसरी ओर, उसने फरमान जारी कर दिया था कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मिलने वाली राहत को केवल पुरुष सदस्य ही प्राप्त कर सकते थे, औरतों को घर से बाहर निकलकर राहत लेने की मनाही थी। विधवाओं के पति जंग में मारे जा चुके थे इसलिए वे उस राहत और भोजन को प्राप्त करने में भी असमर्थ थीं। तालिबान द्वारा औरतों के काम करने की मनाही के कारण अफगानिस्तान में भीख मांगने वाली विधवाओं और बच्चों की संख्या तेजी से बढ़ी है। बच्चे और मां दोनों गंभीर कुपोषण और अवसाद के शिकार हैं जो अक्सर उन्हें खुदकुशी तक ले जाते हैं।

लौ रोशनी की

कमला भसीन

रौंद सकते हो तुम फूल सारे चमन के
पर बहारों का आना नहीं रोक सकते
खनक चूड़ियों की मिटा दो जा चाहो
पर मेरा खनखनाना नहीं रोक सकते
ये कुमकुम, ये टीका, ये बिंदी मिटा दो
मगर रुख पे रंगों का आना नहीं रोक सकते
कहो मुझको बेवा, मुझे खूब कोसो
पर मेरा हंसना–हंसाना नहीं रोक सकते
रचा अपने हाथों विधाता ने मुझको
मेरी सांसों का आना–जाना नहीं रोक सकते
छीन सकते हो गीतों को होठों से मेरे
मेरी रूह का तराना नहीं रोक सकते
थोप सकते हो मुझ पे तुम कालिख तुम्हारी
पर मेरा जगमगाना नहीं रोक सकते
हूं सीमुर्ग मैं मरती नहीं खाक होकर
पर मेरा फिर जन्म पाना नहीं रोक सकते
परछाईं नहीं हूं किसी शख्स की मैं
मेरा अपना फसाना नहीं रोक सकते
नदी एक मैं भी हूं मीरा के जैसी
मेरा समन्दर तक जाना नहीं रोक सकते
खुदा की खुदाई है मेरे भी अंदर
हो मेरा भी जमाना नहीं रोक सकते
विधाता पति है वही सबका स्वामी
मेरा सुहागन कहाना नहीं रोक सकते।

(विधवाओं पर हुई एक कांफ्रेंस के लिए लिखा गीत)

औरत के आजाद मन को बखूबी दर्शाती यह तस्वीर भारतीय कलाकार गुरदीश पन्नू की है जिसे hiveminer.com से लिया गया है।

मंजरी

स्त्री के मन की

Sulabh International Social Service Organisation

THE OFFSETTERS (INDIA) PRIVATE LIMITED
design, pre-press and color offset printing

takshila
connect to the universe

bansal TUTORIALS
FOR CLASS : VI, VII, VIII, IX, X, XI & XII, IIT-JEE (MAINS & ADVANCED) & MEDICAL ASPIRANTS

We Care
I S
INTERNATIONAL SCHOOL

COMFED
PRIDE OF BIHAR
Sudha

आप हमें ई–मेल करें

आप हमें अपने लेख और पत्र ई–मेल भी कर सकते हैं। इस विषय में विशेष जानकारी equityasia@gmail.com पर ली जा सकती है। प्रकाशक की अनुमति के बिना पत्रिका में प्रकाशित किसी भी सामग्री का अन्यत्र इस्तेमाल करना कॉपीराइट का उल्लंघन माना जाएगा।

© : इक्विटी फाउंडेशन